होशंगाबाद विज्ञान

अंक - 39

सहयोग राशि - चार रुपए

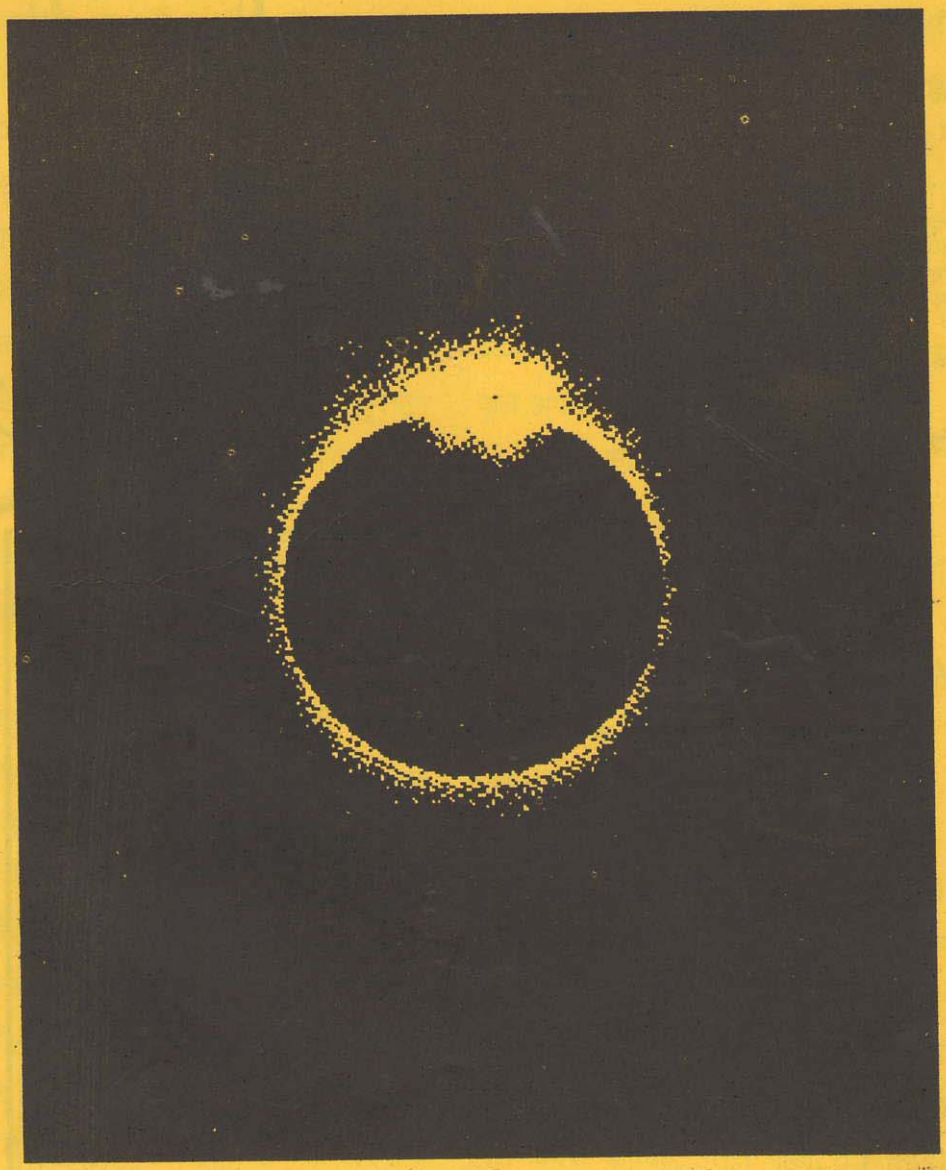

आकाश में हीरा जड़ी अंगूठी

सूर्य ग्रहण : सूर्य, चंद्रमा और पृथ्वी का खेल

जून-जुलाई 1999

अंक 39

संपादन

के.आर. शर्मा
शोभा शिंगणे
अरविंद गुप्ते

संपादन सहयोग

किशोर पंवार
भोलेश्वर दुबे

एकलव्य

ए-28/2 वेदनगर, नानाखेड़ा,
उज्जैन 456 010
फोन (0734) 510583

सहयोग राशि - चार रुपये

इस अंक में

1.	अध्यापकों की ट्रेनिंग पर बहस के कुछ मुद्दे	3-5
2.	शिक्षक प्रशिक्षण में नवाचार	6-7
3.	शिक्षक प्रशिक्षण : कुछ अनुभव	8-9
4.	खोजी-पोथी प्रशिक्षण शिविर : रपट	10
5.	होविशिका विज्ञान उन्मुखीकरण शिविर : एक रपट	11-13
6.	होविशिका की रीढ़ है फीड बैक	14-16
7.	फीड बैक से उभरे शैक्षणिक मुद्दे	17-20
8.	प्राशिका : उन्मुखीकरण शिविर	21-23
10.	विज्ञान प्रशिक्षण में उच्च शिक्षा व शोध संस्थानों की भूमिका	24-25
11.	शैक्षिक प्रशिक्षण का गिरता स्तर और घटती रुचि	26-28
12.	सीताफल के फूल के बहाने...	29-30
13.	सूर्य ग्रहण : सूर्य, चंद्रमा और पृथ्वी का खेल	31

मुद्रक - क्वालिटी ऑफसेट्स, 23 वररुचि मार्ग, फ्रीगंज, उज्जैन दूरभाष - 513538

अध्यापकों की ट्रेनिंग पर बहस के कुछ मुद्दे

☐ कृष्ण कुमार

एक- आजकल दी जा रही ट्रेनिंग की एक बड़ी कमजोरी यह है कि वह अध्यापक को नवाचार के लिए प्रेरित नहीं करती। ट्रेनिंग संस्थाओं का पूरा माहौल और पाठ्यक्रम प्रयोग और नवाचार के प्रति संदेह और डर का रवैया सिखाता है। अक्सर मुझे लगता है कि ट्रेनिंग संस्थाएं शिक्षा की स्थापित पद्धति को नए विचारों और प्रयोगों से बचाए रखने के लिए एक मजबूत किले का काम कर रही है। आखिर क्यों ? एक सीधा सादा कारण तो यह है कि प्रशिक्षण की विषय-वस्तु और शैली की स्थापित परंपराओं के आगे प्रश्न चिन्ह लगा दिए जाने पर प्रशिक्षण देने वालों का आत्म संतोष खतरे में पड़ जाएगा। आत्म संतोष की एक लम्बी श्रृखंला ही शिक्षा व्यवस्था को बांधे है। ट्रेनिंग देने वाला मानता है कि जो कुछ सही और महान है वह जानता है, अध्यापक यह भावना सीख कर बच्चों को सिखाता है और बच्चे यह मानकर बड़े होते हैं कि जो कुछ उन्होंने स्कूल में पाया वही सही ज्ञान था। इस तुष्टि के रहते ज्ञान की मौजूदा अवधारणा और उसे सीखने-सिखाने के प्रचलित तरीकों पर कोई सवाल कैसे उठा सकता है ? प्रशिक्षण संस्थाओं का पाठ्यक्रम यह मानकर बनाया गया कि छात्र अपने-अपने विषय का ज्ञान पा चुके हैं, उन्हें अध्यापक का कौशल भर सीखना है। अपने-अपने विषय का जो ज्ञान छात्रों ने स्कूल और कालिज में पाया है उस ज्ञान के सैद्धांतिक आधार कितने मजूबत या कमजोर है, यह सवाल ट्रेनिंग का पाठ्यक्रम नहीं उठाता। जो छात्र विज्ञान सीखकर आया है उसकी पढ़ाई कितनी वैज्ञानिक थी ? इसी तरह भाषा का छात्र भाषा की और, इतिहास का छात्र इतिहास की जो समझ लाया है उस पर प्रश्न चिन्ह लगाए बगैर इन विषयों के अध्यापन में नवाचार की शुरुवात नहीं हो सकती। आखिर हम यह अक्सर दुहराते हैं कि पूरी शिक्षा पद्धति गलत है- स्कूल में पढ़ाया जा रहा विज्ञान अवैज्ञानिक है, इतिहास भ्रामक और भाषा जड़। यदि पूरी शिक्षा गलत है तो इसी शिक्षा को भावी अध्यापकों की तैयारी की बुनियाद बनने देना कैसे सही हो सकता है?

दो - वर्तमान ट्रेनिंग में शिक्षा की छबि एक निजी पूंजी जैसी है। शिक्षा का सामाजिक संदर्भ प्रशिक्षण संस्थाओं के पाठ्यक्रम, वातावरण और शोधकार्य में नगण्य स्थान पर है, भले वह एक धार्मिक कृत्य की तरह बार-बार याद कर लिया जाता हो। क्या आश्चर्य कि प्रशिक्षण संस्थाएं बी.एड. की फेक्ट्री बनकर रह गई है ? प्रशिक्षण में एक वर्ष बिताकर अध्यापक यह सीखता है कि अध्यापन एक कला है और शिक्षा एक मनोवैज्ञानिक कार्यक्रम जिसकी प्रासंगिकता बच्चे के निजी जीवन के संदर्भ में है। बच्चे की सामाजिक पृष्ठभूमि, आर्थिक स्थिति, घर की भाषा और माता-पिता की दिनचर्या से बच्चे का स्कूली व्यवहार किस प्रकार प्रभावित एवं नियंत्रित होता है,अध्यापक यह नहीं जान पाता। दो-चार-पिटे-पिटाए जुमले वह अवश्य सीख लेता है जैसे "शिक्षा समाज के विकास की बुनियाद है" आदि। इन जुमलों से परे शिक्षा संबंधी सोच को आगे बढ़ाने और अध्यापकों में समाज और समकालीन

इतिहास के प्रति तर्क सम्मत समझ पैदा करने में प्रशिक्षण संस्थाओं की कोई दिलचस्पी नहीं है। अध्यापकों के प्रशिक्षण का कार्यक्रम समाज के प्रति इतना उदासीन क्यों हैं ? क्या यह उदासीनता एक तरह की राजनीति है ? इस राजनीति का जवाब पैदा करने के लिए शिक्षा की समाज शास्त्रीय भूमिका प्रशिक्षण कार्यक्रम में किस प्रकार शामिल की जा सकती है ?

तीन- अध्यापन के पूरे व्यवसाय की तरह प्रशिक्षण का कार्यक्रम श्रेणीबद्ध है। माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक स्कूल के अध्यापकों के लिए एक तरह का प्रशिक्षण है और प्राथमिक स्कूल के अध्यापकों के लिए दूसरी तरह का। इस विभाजन के कारण बच्चों और समाज की जरुरतों की समग्र तस्वीर अध्यापक के मन में नहीं बन पाती। अध्यापन व्यवसाय और उसके उद्देश्य आज की तरह तब तक खंडित रहेंगे जब तक स्कूली शिक्षा के स्तरों के लिए प्रशिक्षण की न्यूनतम समानता नहीं लाई जाती। प्रशिक्षण में समानता आने पर अध्यापन व्यवसाय में फैली श्रेणीबद्धता को समाप्त करने की कोशिश का कोई अर्थ होगा। प्रशिक्षण में समानता लाने के लिए अपेक्षित न्यूनतम योग्यता की मौजूदा कसौटियां भी बदलनी होगी।

चार - सारे देश की ट्रेनिंग संस्थाएं भारतीय शिक्षा का इतिहास एक अनिवार्य पर्चे के रुप में पढ़ाती हैं। इसमें बहुत प्राचीन काल से लेकर एक दम ताजे अतीत का शैक्षिक इतिहास शामिल है। प्राचीन क्या, हाल के अतीत की शिक्षा के बारे में भी कोई समीक्षात्मक दृष्टि इतिहास के पर्चे के पाठ्यक्रम या उसके लिये उपलब्ध पुस्तकों में नहीं है। यह पर्चा शिक्षा के अतीत के प्रति अंध भक्ति सिखाने का माध्यम है। प्राचीन इतिहास पढ़कर भावी अध्यापक गुरु-शिष्य परंपरा और ताजा इतिहास पढ़कर मैकाले की देन जैसे दो-चार मुहावरे सीख लेता है। अन्यत्र वह यह सीखता है कि आधुनिक शिक्षा अंग्रेजों ने शुरु की और आधुनिक अध्यापक को यह नहीं मानना चाहिए कि वह सर्वज्ञ है। ट्रेनिंग की समाप्ति तक इस तरह की अंतर्विरोधी जानकारी और धारणाओं का एक जंगल भावी अध्यापक के दिमाग में खड़ा हो जाता है। जब वह बच्चों के सामने खड़ा होकर पढ़ाना शुरु करता है तो वह उन पुराने संस्कारों से काम लेता है जिसके मुताबिक गुरु का ज्ञान सर्वोपरि है और बच्चे की जरुरतें, जिज्ञासा, सामर्थ्य व सीमाएं वगैरह बेकार की बातें है। वह गुरु के अधिनायक वाद की मजबूत परंपरा में अपने को जोड़ देता है। इस परंपरा के रहते बाल केन्द्रित अध्यापन की शुरुआत कैसे हो सकती है ? यदि हम बच्चे की जिज्ञासा और खोजवृत्ति को बढ़ावा देने वाले अध्यापक तैयार करना चाहते हैं तो उनके प्रशिक्षण में शिक्षा के इतिहास के किताबी अध्यापन की क्या प्रासंगिकता है ?

पांच - यह एक महान आश्चर्य ही है कि भारतीय अध्यापकों की ट्रेनिंग में उस तमाम नए वैज्ञानिक शोध और ज्ञान के लिए कोई विशेष जगह नहीं है जिसका विषय बच्चे की ज्ञानार्जन क्षमताओं का विकास है। देश में अधिकांश प्रशिक्षण संस्थाओं में पढ़ाए जा रहे मनोविज्ञानिक के पते की सुदृढ़ बुनियाद व्यवहारवाद है। विभिन्न आयु वर्गों में पाई जाने वाली सार्वभौमिकता, वृत्तियों व्यावहारिक नियंत्रण के तरीकों और अनुवांशिकता की सही जानकारी मनोविज्ञान के पर्चे में प्रमुख हैं। इन जानकारियों के सामाजिक एवं दार्शनिक आधार क्या हैं? भारतीय विशेषतः ग्रामीण परिवेश में उनकी प्रासंगिकता क्या है ? बच्चों के विकास और सामाजिक परिवर्तन की दिशा के प्रति पहचानी जा सकने वाली अंतर्दृष्टि क्या है?

मनोविज्ञान के पर्चे की मौजूदा हालत से ज्यादा शोचनीय वे सुझाव हैं जो केन्द्र सरकार द्वारा किरीट जोशी की अध्यक्षता में स्थापित एक कमेटी ने दिए हैं । यदि ये सुझाव मान लिए जाते हैं तो प्रशिक्षण पाठ्यक्रम की जैसी भी ढीली-ढाली वैज्ञानिक बुनियाद आज है वह टूट जाएगी और उसकी जगह प्राचीन भारत की आध्यात्मिक एवं रहस्यवादी परंपराएं ले लेंगी । यह सब शिक्षा में नैतिक मूल्य लाने के लिए कोशिश के अंतर्गत होगा । आशय यह है कि प्रशिक्षण का पाठ्यक्रम बेहतर बनाने की जगह और कमजोर बनाने की आशंका है । इस स्थिति का विकल्प कैसे ढूंढा जाए ?

छः - प्रशिक्षण का पाठ्यक्रम विषय-केन्द्रित है । उसे छात्र केन्द्रित बनाने की बात पचास वर्षों से की जा रही है। पर पाठ्यक्रम पर इस बात का कोई असर नहीं पड़ा है । विषय-केन्द्रित पाठ्यक्रम सिर्फ प्रशिक्षण में ही नहीं, स्कूल, कालिज और विश्व-विद्यालय सभी स्तरों पर लागू हैं । विषय-विभाजन की यह संरचना समाज को किस तरह प्रभावित करती है ? यदि इस विषय-केन्द्रित पाठ्यक्रम की जगह समस्या केन्द्रित या लक्ष्य केन्द्रित पाठ्यक्रम पहले प्रशिक्षण में और फिर अन्य संस्थाओं में लाया जाए तो शिक्षा और समाज के मौजूदा रिश्ते के कई पवित्र समीकरण टूटेंगे ।

सात- भावी अध्यापकों को तैयार करने वाली संस्थाएं मूल्यांकन के लिए उसी तरह की परीक्षा लेती हैं जैसी अन्य संस्थाएं लेती हैं । कौन नहीं जानता कि परीक्षा की यह पद्धति गलत है ? उसके दोष इतनी अच्छी तरह जान लिए गए हैं कि उन्हे गिनाने की जरुरत नहीं । इतनी दोष पूर्ण पद्धेति को स्वीकार करके प्रशिक्षण संस्थाएं उसे वैधता देती है । जरुरत इस बात की है कि ट्रेनिंग देने वाली संस्थाएं स्वयं अपनी परीक्षा प्रणाली में नवाचार लाएं, परीक्षा के संबंध में अध्यापकों की मनोवृत्ति बदलें।

आठ - मौजूदा ट्रेनिंग का सबसे कमजोर पक्ष अध्यापन के अभ्यास की व्यवस्था है । हरेक प्रशिक्षणार्थी को अभ्यास कक्षाओं की एक निश्चित संख्या पूरी करनी होती है । अध्यापक को पैंतीस-पैंतीस मिनिट की कुछ इकाइयों में अपने हुनर का अभ्यास और प्रदर्शन करना होता है । पाठ्यक्रम और पाठ्यसामग्री को एक दी हुई सीमा की तरह स्वीकार करना प्रशिक्षण का हिस्सा है । इस तरह अध्यापक में यह धारणा घर कर जाती है कि अध्यापन और पाठ्यक्रम विकास में कोई संबंध नहीं है। दूसरी और अभ्यास शिक्षण का मूल्यांकन भी स्वतंत्र इकाइयों में होता है जिसका फोकस विषय सामग्री को प्रस्तुत करने के चातुर्य पर रहता है । बच्चों के प्रति जिम्मेदारी, उनकी ज्ञानार्जन प्रक्रियाओं में दिलचस्पी, और विषय सामग्री में लगातार सुधार करने की इच्छा और क्षमता से अभ्यास शिक्षण का कोई संबंध नहीं है । न ही स्वयं अपना मूल्यांकन करने की क्षमता का विकास अभ्यास शिक्षण का कोई ध्येय है । कोई अस्सी बरस पहले जान डूयई ने लिखा -

सच्ची बौद्धिक समीक्षा का सबसे बड़ा कोई मजाक नहीं हो सकता कि एक छात्र को थोड़े से पाठ पढ़ाने के लिए दिए जाएं, उसकी कक्षाओं में एक निरीक्षक बैठा रहे और हर पाठ के अंत में पढ़ाने के तरीके और उसके अच्छे-बुरे पक्षों पर एक-एक पाठ के अलग संदर्भ में टिप्पणी की जाए । समीक्षा के इस तरीके का प्रयोग अध्यापन के प्रशिक्षणार्थी को कुछेक चालें और औजार देने के लिए भले हो सके, एक चिंतनशील और स्वतंत्र अध्यापक के विकास के लिए नहीं हो सकता ।

कृष्ण कुमार
शिक्षाविद, दिल्ली - विश्वविद्यालय, दिल्ली

शिक्षक प्रशिक्षण में नवाचार

☐ सुशील जोशी

मुझे याद नहीं कि यह बात किसने बताई थी, इसलिए उन अनाम सज्जन से क्षमा याचना सहित उनकी बात यहाँ उद्घृत कर रहा हूँ । उन्होंने कहा था कि आम तौर पर शिक्षक प्रशिक्षण (बी.एड./बी.टी. आई.) के दौरान शिक्षा संबंधी कई सिद्धांत पढ़ाए जाते हैं । प्रयोग विधि, खोज पद्धति,बाल केन्द्रित शिक्षण आदि सभी पढ़ाया जाता है । मगर इन सबसे ऊपर एक सिद्धांत होता है, वह यह कि कक्षा में वह करो जो तुम्हारे प्रशिक्षक ने तुम्हारे साथ किया था, न कि वह जो प्रशिक्षक ने कहा था कि करना चाहिए । बहुत ही गूढ़ार्थी बात है । प्रशिक्षक यदि आपसे प्रशिक्षण के दौरान कहे कि खोज पद्धति अपनानी चाहिए, तो आप भी अपने छात्रों से ऐसा कह सकते हैं, करने की कोई जरुरत नहीं ।

इसके मद्दे नज़र देखें तो होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम ने शिक्षक प्रशिक्षण की दुखती रग को पकड़ा है। होविशिंका शिक्षक प्रशिक्षण में प्रयोग आधारित खोज पद्धति के मूल बिंदु प्रस्तुत करने में समय जाया नहीं किया जाता । तीन सप्ताह के प्रशिक्षण के पहले दिन ही (बगैर किसी भूमिका के) प्रयोग आधारित खोज पद्धति लागू करना शूरु कर दिया जाता है । वे सारी प्रक्रियाएं पूरी संजीदगी से की जाती हैं, जो शिक्षकों से कक्षा में करवाने की अपेक्षा है । टोलियों में विभाजन प्रतिवेदन, किट सामग्री का वितरण, प्रयोग खुद करना, अवलोकन रिकार्ड करना, उन पर चर्चा करना, निष्कर्ष निकालना, निष्कर्षों को नई परिस्थिति में लागू करना, नए प्रयोग सोचना, आम जीवन के अवलोकनों को पाठ्य वस्तु से जोड़ना असहमति को, भिन्न अवलोकनों को महत्व देना वगैरह, वगैरह। एक तरह से तीन सप्ताह तक शिक्षण की एक पूरी प्रक्रिया व दर्शन में शिक्षक भाग लेते हैं ।. और यह तीन वर्ष तक चलता है, प्रतिवर्ष तीन-तीन सप्ताह।

इस प्रक्रिया में प्रशिक्षक की भूमिका काफी अलग हो जाती है । उसे मात्र बाल मनोविज्ञान, शिक्षा के सिद्धांत का सैद्धांतिक ज्ञान होने से काम नहीं चलेगा । वास्तविक शिक्षण स्थिति में इस ज्ञान का उपयोग उसे पता होना चाहिए । असहमति/भिन्न अवलोकन का सम्मान करना चाहिए, यह पता हो किंतु खुद के पास इसके लिए जरुरी हुनर या धैर्य न हो तो क्या फायदा । उपरोक्त समस्त

बातों को कक्षा संचालन के ताने-बाने में बुनना जरुरी है।

जिस तरह से किताब में प्रयोगों के महत्व पर एक पैरा लिख देने से बात नहीं बनती, बल्कि पूरी किताब में इस महत्व को 'करनी' से उभारना होता है, उसी प्रकार से प्रशिक्षण में भी इस बात पर व्याख्यान देने से काम नहीं चलता कि शिक्षण प्रक्रिया सीखने वाले पर केन्द्रित होनी चाहिए ।

इस तरह से प्रशिक्षण आयोजन से एक बड़ी सफलता यह मिली है कि आज शिक्षकों का एक बड़ा दल है जो इस पद्धति के मर्म को समझता है, उसे लागू कर सकता है । किंतु यदि व्यापक स्तर पर देखें, तो नज़र आता है कि अधिकांश शिक्षकों ने मात्र इतना ही पकड़ा है कि कक्षा में प्रयोग होने चाहिए । इनमें से कुछ शिक्षक बच्चों से प्रयोग करवाते हैं तथा कुछ प्रयोग करके दिखा देते हैं। वैसे मैं मानता हूं कि आम-तौर पर व्याप्त जड़ता के माहौल में यह भी एक सकारात्मक कदम है। किंतु यथेष्ट नहीं है।

दूसरी बात जो ज्यादा चिंताजनक है, यह है कि आम तौर पर बच्चों की सीखने की क्षमता में विश्वास का ह्रास हुआ है । आम लोग और शिक्षक, दोनों ही इस शंका से ग्रस्त हैं कि बच्चे सीख-समझ नहीं सकते इसलिए जहाँ उम्मीद की जाती है कि बच्चे स्वयं प्रयोग करके अवलोकन लें, उन अवलोकनों का विश्लेषण करें, अपने निष्कर्ष निकालें, निष्कर्षों की पुष्टि करें तो आप पाएंगे कि अधिकांश शिक्षकों को भरोसा नहीं है कि बच्चे यह सब कर पाएंगे । और यदि इन सबके साथ यह अपेक्षा भी जोड़ दी जाए कि बच्चे अपने शब्दों में निष्कर्ष लिखें तो कहा जाएगा कि अब तो आप हद कर रहे हैं । हमारे शिक्षक प्रशिक्षण में इस अविश्वास व शंका से मुखातिब होने की जरुरत है ।

एक बात और कहना चाहुंगा, पिछले कुछ वर्षों से हमने प्रयास किया है कि स्रोत शिक्षक प्रशिक्षण में ज्यादा प्रमुख भूमिका निभाएं । उन्हें कक्षा संचालन के नेतृत्व की जिम्मेदारी सौंपी गई है । इसका सकारात्मक परिणाम यह हुआ है कि वास्तविक कक्षा के अनुभवों व सरोकारों को प्रशिक्षण प्रक्रिया में ज्यादा स्थान मिला है । एक स्रोत शिक्षक उन दिक्कतों को ज्यादा अच्छे से समझ पाता/पाती है, जो कक्षा में बच्चों के साथ काम करते हुए आती हैं तथा उनके व्यावहारिक समाधान भी सुझाने की स्थिति में होती/होता है । किंतु इसका एक नकारात्मक पक्ष भी रहा है । उक्त मैदानी अनुभव कभी-कभी मानस पर इतना हावी हो जाता है कि हम मानने लगते हैं कि इसे बदलना संभव ही नहीं है । 'अंदर के व्यक्ति' को कभी-कभी बाधाएं अत्यंत दुर्गम लगती है ।

इस मामले में एक समस्या का जिक्र करना लाजमी है। कुछेक स्रोत शिक्षकों को छोड़ दें तो बाकी का आग्रह यह होता है कि शिक्षक को कक्षा में जाकर प्रयोग करवाना है तथा निष्कर्ष निकलवाना है - बाल वैज्ञानिक की लीक पर चलते हुए । अतः हमें प्रशिक्षण में यही करना चाहिए । यह पूरे लक्ष्य का मात्र एक अंश है । होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम में शिक्षा का एक व्यापकतर लक्ष्य स्वतंत्र रुप से सोचने वाले छात्र का निर्माण भी है । परंतु रोजमर्रा के सरोकार उस पर हावी हो जाते हैं । इन दो चीजों के बीच एक संतुलन की तलाश प्रशिक्षण की एक और चुनौती है । और भी मुद्दे होंगे, और लोग भी कुछ कहेंगे, मैं अपनी बात यहीं खत्म करता हूं।

सुशील जोशी

विज्ञान व पर्यावरण लेखन में सक्रिय ।

होशंगाबाद विज्ञान से संलग्न ।

शिक्षक प्रशिक्षण - कुछ अनुभव

☐ ओम प्रकाश पायक

विभिन्न प्रकार के शिक्षक प्रशिक्षणों का मुख्य उद्देश्य कुशल शिक्षक तैयार करना है न कि उन्हें सैद्धांतिक विषयों के ज्ञाता बनाना । अधिकांश प्रशिक्षणों में व्याख्यान पद्धति का बाहुल्य रहता है बहुत कम प्रशिक्षणों में करके सीखो पद्धति का उपयोग होता है । एक अच्छा प्रशिक्षण कार्यक्रम विषय वस्तु के साथ-साथ शिक्षकों में तर्क, विवेक, विभेद, अर्थात बौद्धिक कुशाग्रता की क्षमता प्रदान करता है और शिक्षक के मस्तिष्क को संयम, साहस, उदारता एवं न्याय धारण करने का प्रशिक्षण देता है । अच्छे प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से प्रशिक्षणार्थियों में व्यक्तित्व की पूर्णता का विकास एवं शैक्षणिक,शैक्षणेत्तर एवं सह शैक्षणिक गतिविधियों के माध्यम से अपने प्रभुत्व को स्थापित करता है ।

आज प्रशिक्षण संस्थाओं में सेवाकालीन एवं सेवापूर्व प्रशिक्षणों में सैद्धांतिक विषयों को तो भाषण देकर समझाया जाता है, किंतु व्यावहारिक ज्ञान को भी भाषण के माध्यम से सिखाया जाता है और आशा की जाती है कि प्रशिक्षण में पढ़े हुए सैद्धांतिक ज्ञान को प्रशिक्षण से लौटकर प्रशिक्षित शिक्षक अपने विद्यालय में व्यवहार में लाएगा । किंतु प्रशिक्षण से लौटने के बाद वह शिक्षक भी अपनी कक्षा में भाषण ही देता हैं । तब हम आश्चर्य करते हैं कि शिक्षक भाषण क्यों दे रहा है? सीधी सी बात है " जैसा लिया वैसा दिया" । जब प्रशिक्षकों ने प्रशिक्षण संस्थाओं में उसे भाषण दिए तो शिक्षक अपनी कक्षाओं में बच्चों के सम्मुख भाषण दे रहा है तो इसमें आश्चर्य कैसा ? कहावत है न "पेड़ बोए बबूल के, तो आम कहाँ से होय" ।

इस शताब्दी के अंतिम दशक में कई महत्वपूर्ण प्रशिक्षण म.प्र. के जिला शिक्षा और प्रशिक्षण संस्थान में आयोजित हो रहे हैं । जिनमें से सीखना-सिखाना पैकेज, शिक्षक समाख्या, होशंगाबाद विज्ञान प्रशिक्षण, आंगनवाड़ी कार्यकर्ता प्रशिक्षण, अनौपचारिक शिक्षा प्रशिक्षण, पर्यावरण-प्रशिक्षण, कंप्यूटर दूर संवेदी, टू-वे पायलेट प्रोजेक्ट प्रशिक्षण, विषय वस्तु आधारित प्रशिक्षण, आकलन प्रशिक्षण, शैक्षिक समन्वय प्रशिक्षण आदि । वैसे तो सभी प्रशिक्षणों की अपनी-अपनी विशेषता होती है । कुछ अच्छाइयां होती है तो कुछ कमियां । कुछ प्रशिक्षणों में अच्छाइयों के बावजूद आर्थिक बजट की कमी के कारण मजबूरी वश कईं अच्छाइयों को छोड़ना पड़ता है । कहीं समय की कमी होती है तो कहीं स्थान, तो कहीं अच्छे कुशल प्रशिक्षकों की कमी होती है । अगर म.प्र. के सभी शिक्षा विद एवं प्रशिक्षण आयोजनकर्ता निजी स्वार्थों को छोड़कर एक ऐसी प्रशिक्षण योजना का निर्माण करें जिसमें सभी प्रशिक्षकों की अच्छाइयों का समावेश हो तो हम वास्तव में बच्चों के हित में कुछ कार्य कर पाएंगे और देश का भविष्य उज्ज्वल कर पाएंगें।

प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर शिक्षा में आमूलचूल परिवर्तन करने के लिए कुछ महत्वपूर्ण प्रशिक्षण हैं जिनकी प्रक्रियाओं ने मुझे काफी प्रभावित किया है । उनमें से मैं यहाँ होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम का उल्लेख करना उचित समझता हूँ । इस प्रशिक्षण में मूल रुप से शिक्षक और बालक वैज्ञानिक की भांति कक्षा में कार्य करते हैं । बच्चों की सीखने की प्रक्रिया में अभिन्न भागीदारी होती हैं। यह कक्षा में शिक्षकों और छात्रों के बीच भय और दबाव से प्रेरित छात्रों पर थोपी गई अनुशासन भावना को मूलतः अस्वीकार करता है और शिक्षक और बच्चों की

सीखनें की प्रक्रिया में भागीदारी मानकर चर्चा एवं संवाद को शिक्षण का महत्वपूर्ण अंग मानता है । यह प्रशिक्षण शिक्षण को पर्यावरण से जोड़ता है । यह बच्चों को जागरुक व जिज्ञासु बनाने का प्रयास करता है और सवालों के उत्तर खोजने के लिए उनकी तार्किक विश्लेषण क्षमताओं को विकसित करता है । यह बच्चों की अवलोकन क्षमता व हस्त कौशल को विकसित करने की कोशिश करता है। यह सीखने व शिक्षण को एक थोपे गए बोझ के स्थान पर रुचिपूर्ण गतिविधि बनाने की कोशिश करता है । इसमें शिक्षण सामग्री को स्वरुप देने उसका विकास करने और उसे शाला में पढ़ाने में शिक्षक की अहम भूमिका होती है।

वैसे तो यह प्रशिक्षण एक कक्षा हेतु मात्र तीन सप्ताह का होता है परंतु समय-समय पर अनुवर्तन एवं मासिक गोष्ठियाँ, कार्यशालाएँ प्रशिक्षण को व्यापक एवं सतत बनाती है जिससे शिक्षकों को सतत् मार्गदर्शन एवं प्रशासनिक व शैक्षिक समस्याओं के समाधान में मदद मिलती है । इस कार्यक्रम के अंतर्गत परिक्षाएं भी परंपरागत पद्धति से हटकर होती है । इसमें बच्चों की अवलोकन क्षमता, आंकड़ों को एकत्रित करना और व्यवस्थित करना, स्वतंत्र चिंतन, तार्किक विश्लेषण और विषय की अवधारणात्मक समझ की जाँच होती है । इस परीक्षा से यह भी जाँचा जाता है कि बच्चों में प्रयोग करने, चित्र बनाने आदि का हस्तकौशल कितना है और उनकी सृजनात्मक क्षमता और नवाचार की इच्छा कितनी विकसित हुई है । परीक्षा में बच्चे की पर्यावरण के प्रति सजगता, स्वाभाविक जिज्ञासा, विज्ञान में तुलना व तथ्यों की प्रामाणिकता, घट बढ़ व कई संभव उत्तरों के स्वीकारने की तैयारी व वैज्ञानिक अवधारणाओं की स्पष्टता आदि बातें भी जाँची जाती है ।

इस प्रशिक्षण कार्यक्रम की एक विशेषता यह भी है कि इसे देने के लिए विषय विशेषज्ञों का एक वर्ग है जिसमें एकलव्य तथा अन्य स्वयंसेवी संस्थाओं के कार्यकर्ता, दिल्ली विश्वविद्यालय, टाटा इंस्टीट्यट, आई.आई. टी. और म.प्र. के महाविद्यालयों, डाइट और हायर सेकंडरी, मा. शालाओं के कई शिक्षक एवं जागरुक छात्र हैं ।

सीखना-सिखाना पैकेज पूर्ण रुप से गतिविधि एवं दक्षता आधारित कार्यक्रम हैं । जिसमें सतत आंकलन की प्रक्रिया महत्वपूर्ण है । आकलन की प्रक्रिया भय मुक्त होती है । जिसमें अंकों का कोई स्थान नहीं होता है इनकी जगह छात्रों की प्रगति उनके पिछले माह की तुलना के लिए या प्रगति हेतु निष्कर्षों या समस्याओं को एक वाक्य की टीप द्वारा प्रदर्शित किया जाता है । इस प्रणाली को "सीखने के उपकरण" के रुप में इस्तेमाल करके म.प्र. के शिक्षण को आनंददायी एवं बालकेन्द्रित बनाए जाने की कोशिश की जा रही है ।

जैसी की मैंने पूर्व में ही चर्चा की है कि हर प्रशिक्षण की अपनी सीमाएँ होती है । हालांकि पैकेज में सभी प्रशिक्षणों की अच्छाइयों का समावेश किया गया है उसके बावजूद भी पैकेज कार्यक्रम पूर्ण रुप से सफल नहीं हो पा रहा है, ये अपने निजी स्वार्थ छोड़कर प्रशिक्षण को भाषणों की शब्द जंजीरों से मुक्त करके प्रयोग एवं चर्चा द्वारा निष्कर्ष विधि पर आधारित करके प्रशिक्षणार्थी केन्द्रित कर दिया जाए अर्थात प्रशिक्षक एवं प्रशिक्षणार्थियों के बीच अन्तः क्रियाओं, संवादों, गतिविधियों, प्रयोगों सहभागियों एवं नवाचारों का वातावरण हो तथा थोपे हुए निष्कर्षों को स्वीकार करने की बजाए स्वयं के अनुभवों के द्वारा निकाले गए निष्कर्षों पर विश्वास करेगा तो ऐसा प्रशिक्षण कार्यक्रम एक नया इतिहास रच सकता है ।

ओमप्रकाश पायक
व्याख्याता-जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान,उज्जैन

खोजी-पोथी प्रशिक्षण शिविर, मसूदा (राज.) एक रिपोर्ट

मध्यप्रदेश के होशंगाबाद विज्ञान के समान ही राजस्थान में भी करके सीखो पद्धति पर आधारित विज्ञान अपने प्रारंभिक दौर से गुजर रहा है । लोक जुम्बिश परिषद तथा विद्या भवन शिक्षा केन्द्र के सहयोग से यह कार्यक्रम वर्तमान में अजमेर जिले के पीसागंन विकासखंड में चलाया जा रहा है । राजस्थान में इस विज्ञान पुस्तक को 'खोजी-पोथी' नाम दिया गया है ।

इस कार्यक्रम के पुस्तक निर्माण से लेकर शिक्षण प्रशिक्षण तक के कार्यों में स्थानीय स्रोत दल के साथ होशंगाबाद विज्ञान स्रोत दल की महत्वपूर्ण भूमिका रही है

शिक्षक प्रशिक्षण शिविर का आयोजन गत् वर्ष से ही हो रहा है, जिसमें कक्षा 6 की खोजी पोथी का प्रशिक्षण दिया गया । यह प्रशिक्षण क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, अजमेर में सम्पन्न हुआ ।

इस वर्ष कक्षा 7 का प्रशिक्षण शिविर जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, मसूदा (जि. अजमेर) में 14 जून से 24 जून 99 तक आयोजित हुआ । 14-15 को स्रोत दल की तैयारी तथा 16-24 तक मुख्य प्रशिक्षण प्रस्तावित था। मध्यप्रदेश से होशंगाबाद विज्ञान के 12 स्रोत व्यक्ति तथा राजस्थान के 8-10 व्यक्तियों ने मिलकर प्रशिक्षण की योजना बनाई । इसके अनुसार प्रातः 10.00 से 5.00 तक प्रशिक्षण के दो सत्र होने थे तथा शाम को अनौपचारिक गोष्ठी, व्याख्यान या आकाश दर्शन जैसे कार्यक्रम प्रस्तावित थे ।

प्रशिक्षण की शुरुआत में कुल मिलाकर 20-22 प्रशिक्षणार्थियों का पंजीयन हुआ । उनमें से 4-5 व्यक्ति ही छात्रावास में रुकने वाले थे, अतः प्रशिक्षण 10.30 से 4.30तक ही सिमटकर रह गया । प्रशिक्षणार्थियों की उपस्थिति संख्या इतनी कम रहने के कई कारणों में से प्रमुख कारण मुख्य शहर से प्रशिक्षण स्थल की दूरी था ।

पहले दिन कुछ सामान्य सी बातचित व परिचय के बाद कुछ खेल खिलवाड़ अध्याय प्रारंभ किया गया । तथा इन ९ दिनों के दौरान खोजी पोथी के 15 अध्यायों का प्रशिक्षण दिया गया । इसमें अन्य प्रयोगों के साथ-साथ लंबी अवधि के प्रयोग के रुप में पेड़-पौधों में पोषण का पत्तियों पर मंड परीक्षण वाला प्रयोग करवाया गया । इससे शिक्षकों को ये भली-भांति स्पष्ट हो गया कि लंबी अवधि के प्रयोगों को कक्षा में कैसे करवाया जाता है ।

संपूर्ण प्रशिक्षण के दौरान शिक्षकों की ओर से इस नई शिक्षण पद्धति के पक्ष-विपक्ष में कई प्रश्न उठते रहे, जिनका समाधान स्रोत व्यक्तियों द्वारा यथासमय किया जाता रहा । उनको प्रश्नों के समाधान के लिए सवालीराम से संपर्क करने को भी कहा गया । ये सवालीराम हमारे यहां होशंगाबाद तथा राजस्थान के लिए उदयपुर में बसे हुए हैं ।

शिक्षकों का मानना था कि इस पद्धति से बच्चों की विज्ञान विषय के प्रति रुचि में बढ़ोतरी तो होगी ही, साथ ही इसकी मूलभूत अवधारणाओं को समझने में भी सहायता मिलेगी । हाँ, इसमें शिक्षकों की भागीदारी कुछ अलग ढंग से होगी, जिसमें उन्हें कक्षा में जाने के पूर्व ही अध्याय की तैयारी करनी पड़ेगी ।

होविशिका के समान ही यहाँ भी स्रोत दल की भूमिका महत्वपूर्ण रही । यहाँ भी प्रतिदिन प्रशिक्षण के पश्चात फीड बैक मीटिंग होती थी, इसी के आधार पर अध्यायों में आवश्यक परिवर्तन तथा अगले दिन के प्रशिक्षण में सुधार के लिए योजना बनाई जाती थी । शेष बचे हुए समय का उपयोग शिक्षक निर्देशिका बनाने में किया जाता था । प्रशिक्षण के दौरान शिक्षकों के लिये समस्यात्मक बातों को शिक्षक निर्देशिका में स्पष्ट करने का प्रयास किया जाता है । कक्षा में आमतौर पर आने वाली समस्याओं को निपटने के तरीके के बारे में भी सामान्य-सी चर्चा भी की गई है ।

चेतना खरे

विद्यार्थी जीवन से होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम से जुड़ाव । वर्तमान में एकलव्य के होशंगाबाद केन्द्र में कार्यरत।

हो.वि.शि. का. विज्ञान उन्मुखीकरण शिविर, (मई, 1998) : एक रपट

पिछले दो सालों से नर्मदा संभाग में विज्ञान ट्रेनिंग विकेन्द्रीकृत तरीक से ब्लॉक स्तर पर आयोजित की जा रही थी । इस नए तरीके के तहत 1995 में कक्षा 6 की और 1997 में कक्षा 7 की ट्रेनिंग शिक्षकों को दी जा चुकी थी । हालांकि कुल मिलाकर विकेन्द्रीकृत ट्रेनिंगों का अनुभव अच्छा रहा है । पर पिछले साल की ट्रेनिंग के बाद से ही होविशिका समूह में यह मत बन गया था कि कक्षा 6 और 7 की ट्रेनिंग ले चुके शिक्षकों को एक केन्द्रीय बड़ी ट्रेनिंग का अनुभव जरुर मिलना चाहिए । तदनुसार इस वर्ष पूरे वर्ष नर्मदा संभाग के लिए होशंगाबाद में एक बड़े प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया गया । साथ ही उन्हीं दिनों में मालवा क्षेत्र के लिए इंदौर में एक अलग प्रशिक्षण शिविर का आयोजन तय किया गया । यानी इस बार दो बड़े शिक्षक प्रशिक्षण एक साथ हुए - एक होशंगाबाद में और दूसरा इंदौर में ।

यह रपट होशंगाबाद शिविर का एक लेखा-जोखा प्रस्तुत करती है-

स्रोतदल तैयारी कार्यशाला- स्रोत शिक्षकों को प्रशिक्षण शिविर के शुरु होने से तीन दिन पहले, यानी 8 मई को प्रशिक्षण स्थल पर पहुंचने के आदेश प्रसारित करवाए गए थे । यह इसलिए कि पूरे स्रोतदल को 8-10 मई, तीन दिन के लिए प्रशिक्षण हेतु शैक्षणिक तैयारी करने का पर्याप्त समय और मौका मिल सके ।

पर, खेद कि बात यह रही कि 8 मई को दो-तीन स्रोत शिक्षक ही अपनी उपस्थिति दर्ज करा पाए । 10 मई तक भी कुल 8-10 स्रोत शिक्षक ही हाजिर हो पाए थे । साथ ही इन दिनों अधिकांश समय एकलव्य के कार्यकर्त्ताओं को शिविर हेतु व्यवस्थात्मक इंतजाम दुरुस्त करने पड़े । लिहाजा जैसी उम्मीद और अपेक्षा थी उसकी तुलना में इस कार्यशाला में स्रोत दल की तैयारी का काम बहुत कम हो पाया । इससे शुरुआती दिनों में तो जरुर अच्छा प्रशिक्षण देने में कईं दिक्कतें आई ।

उन्मुखीकरण शिविर-चूंकि एक बड़ी संख्या में प्रशिक्षणार्थी होशंगाबाद और उसके आसपास के क्षेत्रों के थे, अधिकांश प्रशिक्षणार्थियों ने शिविर की आवासीय व्यवस्था का लाभ न उठाते हुए रोज अपने मुख्यालय/घरों से अप-डाऊन किया । वैसे प्रशिक्षणार्थियों के लेट आने की थोड़ी बहुत समस्या हर ऐसे प्रशिक्षण शिविर में देखने को मिलती है, पर इस बार स्थिति कुछ ज्यादा गंभीर थी। प्रशिक्षण कभी भी अपने नियमित समय सुबह सात बजे शुरु नहीं हो पाया । आधे एक घंटे की देर हो ही जाया करती थी । पूरे प्रशिक्षण पर इस समस्या का प्रतिकूल असर पड़ा । प्रशिक्षण काल घट जाने के कारण पाठ्यक्रम पूरा करने में दिक्कतें आई । शिविर में सीखने-सिखाने का उतना अच्छा माहौल नहीं बन पाया जितना कि आमतौर पर हो जाता है । प्रशिक्षकों और प्रशिक्षणार्थियों के बीच कभी-कभार इस बात पर कटुता भी पैदा हुई । हालांकि प्रशिक्षक दल ने तमाम कोशिशें कि प्रशिक्षणार्थी समय पर आ जाएं, पर अंत तक यह संभव न हो सका । आखिर में यही तय हुआ कि ऐसे शिक्षक जिनकी उपस्थिति अनियमित थी, उनके उपस्थिति प्रमाण-पत्र में इस बात का स्पष्ट

उल्लेख किया जाए ।

प्रशिक्षणार्थियों से लंबी अवधि के प्रयोग सफलता पूर्वक करवा लेना हर प्रशिक्षण शिविर में एक चुनौती के रुप में पेश आता है । इस मायने में यह प्रशिक्षण शिविर कोई भिन्न नहीं था । सभी वर्गों में यह प्रयोग ठीक तरह से हो पाए इसके लिए मात्र इन प्रयोगों के लिए स्रोतदल की अलग से एक टोली बनाने की योजना थी । परंतु कम स्रोत शिक्षकों के आने के कारण ऐसा संभव न हो सका । तब विकल्प के रुप में एक टोली को अतिरिक्त जिम्मेदारी दी गई कि वह हर वर्ग में जाकर हर लंबी अवधि के प्रयोग के बारे में शिक्षकों से चर्चा करें । क्या, कैसे और क्यों अवलोकन लेने है, इसके बारे में शिक्षकों से बात करें। साथ ही प्रशिक्षणार्थियों की हर टोली के प्रयोग सेट करवाने का काम भी इस दल को दिया गया था । प्रयोग तो सभी वर्गों में सेट हो गए थे पर उनके उद्देश्य संबंधित सावधानियां और कैसे अवलोकन लेने हैं, आदि जैसी जरुरी बातें काफी शिक्षकों के मन में अस्पष्ट रह गई ऐसा कुछ दिनों के अनुभव के पश्चात स्रोतदल को स्पष्ट हो गया था । स्थिति से निपटने के लिए शिक्षकों की सभी टोलियों को कागज पर यह सब जानकारियां टाईप करवा कर दी गई इससे शिक्षकों को काफी मदद मिली । जानकारी के अभाव में हर वर्ग में कुछ टोलियों के प्रयोग तो नष्ट हो गए थे, पर बाकी शिक्षक अधिकांश लंबी अवधि के प्रयोगों को सफलता पूर्वक कर पाए। पौधों में प्रजनन को लेकर कुछ प्रयोग जरुर प्रशिक्षण स्थल के नजदीक कोई बाड़ी के न मिल पाने के कारण नहीं हो पाए । कक्षा 7 के शिक्षकों को इन प्रयोगों में फूल और फलों के अवलोकन, विच्छेदन और उसके उपरांत चर्चा से ही संतुष्ट होना पड़ा । लेकिन परिवर्धन अध्याय (कक्षा 8) के मुर्गी के अंडों वाले प्रयोग कक्षा 8 के सभी वर्गों में हो पाए, यह इस शिविर की एक छोटी गौरतलब उपलब्धि रही।

प्रशिक्षण कैसा हो रहा है, शिविर के दौरान इसका सतत् आकलन दो 'फीडबैक' प्रणालियों के जरिए होता है । एक हर वर्ग में रोज पढ़े जाने वाले प्रतिवेदन के जरिए । दूसरा, हर रोज प्रशिक्षण के बाद होने वाली स्रोत दल फीड बैक बैठक के द्वारा । शिविर के दौरान इन दोनों जरियों से कई विचारणीय मुद्दे उभरे । इनमें प्रमुख इस प्रकार है -

प्रशासनिक मुद्दे- जैसे कि पहले कहा जा चुका है इन शिविरों के आयोजन में शासकीय तंत्र की एक प्रमुख भूमिका होती है । अतः इनके आयोजन की पूरी जिम्मेदारी लोक शिक्षण विभाग और डाइट पर होती है । एकलव्य का काम डाइट को शिविर के दौरान शैक्षणिक सहयोग देने का होता है ।

स्रोत दल की फीड बैक मीटिंगों में शिविर के आयोजन में शासकीय विभागों की भूमिका एक प्रमुख मुद्दे के रुप में उभरी । ऐसी एक मीटिंग में डाइट के प्रभारी प्राचार्य और उनके कुछ सहयोगी भी शामिल हुए थे । तब स्रोतदल सदस्यों और इन अधिकारियों के बीच इस शिविर में डाइट और लोक शिक्षण विभाग की भूमिका पर काफी अच्छा और स्पष्ट विचारों और अनुभवों का आदान-प्रदान हुआ । इस चर्चा के प्रमुख बिंदु इस प्रकार रहे -

(क) शिविर हेतु व्यवस्थाएं, जैसे आवास स्थल, कक्षाएं, कक्षाओं के लिए दरी आदि उपलब्ध कराने में लोक शिक्षण विभाग ने उस स्तर के नेतृत्व और भागीदारी का प्रदर्शन नहीं किया जैसा कि उनका दायित्व है । ऐसा स्रोत दल के अधिकांश सदस्यों का अनुभव था । इस वजह से शुरु से ही सभी प्रकार के इंतजाम करने का

काम एकलव्य के कंधों पर आ गया था। लिहाजा एकलव्य कार्यकर्ता ओर स्रोतदल सदस्य शिविर के शैक्षणिक पक्ष पर पर्याप्त ध्यान नहीं दे पाए। दरअसल, ऐसे अनुभव प्रायः हर शिविर में होते आए हैं। परंतु इस साल परिस्थितियां कुछ ज्यादा चिंताजनक थी, ऐसा स्रोतदल का मानना था।

(ख) हालांकि शिविर का आयोजन डाइट के तत्त्वावधान में हो रहा था, इस संस्थान की शिविर में भागीदारी की सीमाएं दिखाई पड़ी। यहां तक कि उनकी शिविर में उपस्थिति भी नगण्य ही रही। स्रोत दल का आकलन था कि डाइट ने अपनी पूरी भूमिका मात्र शैक्षणिक सामग्री को उपलब्ध कराने और शिक्षकों के दैनिक/यात्रा भत्तों के भुगतान करने तक सीमित कर रखी है। इसका पूरे प्रशिक्षण पर प्रतिकूल असर तो पड़ता ही है, साथ ही डाइट खुद एक स्तरीय शैक्षणिक अनुभव का लाभ उठाने से वंचित रह जाता है। फीड बैक बैठक में चर्चा के दौरान डाइट की भागीदारी को और बढ़ाने में अपनी मजबूरी भी जाहिर की। उन्होंने बताया कि वर्तमान में डाइट की स्टाफ संख्या इतनी कम है और जिम्मेदारियां इतनी ज्यादा कि वे और उनके सहयोगी इससे ज्यादा कुछ और करने में असमर्थ हैं। उन्होंने एस.सी.इ.आर.टी. भोपाल का ध्यान इस समस्या की ओर कई बार आकर्षित किया है, परंतु स्थिति जस की तस बनी हुई है।

(ग) शासन द्वारा पुरुष प्रशिक्षणार्थी शिक्षकों के लिए आवासीय व्यवस्था शा.कन्या उ.मा. शाला में की गई थी। शाला में शौचालय की हालत अत्यंत खराब होने के कारण ठहरे हुए शिक्षकों को काफी परेशानियों का सामना करना पड़ा। एकलव्य के बार-बार कहने पर संयुक्त संचालक कार्यालय ने इस समस्या को हल करने की कुछ कोशिशें तो की, परंतु अंत तक कोई स्थायी निदान नहीं खोजा जा सका। प्रशिक्षण स्थल एस.एन.जी. उ.मा.शाला होशंगाबाद रखा गया था। शिविर के आयोजकों को वहां के प्राचार्य का प्रशिक्षण के प्रति रवैया कुछ निराशाजनक लगा। संभवतः किसी शाला में एक बड़े शिविर का आयोजन उस शाला के अध्यापकों और प्राचार्य के लिए एक न टाल सकने वाले सिरदर्द की तरह ही प्रतीत होता होगा। स्रोतदल मोतीलाल नेहरु मैट्रिकोत्तर आदिम जाति छात्रावास, बालागंज में ठहरा हुआ था। यह आदिम जाति कल्याण विभाग का छात्रावास है। हालांकि कमिश्नर ने होशंगाबाद के अधिकारियों को स्पष्ट निर्देश दिए हुए थे कि उनके विभाग के छात्रावासों में शिविर में भाग लेने आए शिक्षकों के ठहरने हेतु पूरी मदद और इंतजाम करना है, छात्रावास स्तर के पदाधिकारियों ने सहयोग करने में काफी अरुचि प्रदर्शित की। इससे स्रोतदल के ठहरने का इंतजाम उतना बढ़िया नहीं हो पाया जितना की सामान्य रुप से संभव था।

(घ) संभवतः होविशिका प्रशिक्षण शिविरों और लोक शिक्षण विभाग द्वारा आयोजित अन्य शिविरों में एक बड़ा गुणात्मक अंतर होता है। शासकीय तंत्र की कार्य संस्कृति, कार्यशैली और प्रतिबद्धता शायद इस किस्म की नहीं होती कि वह खुद अपने बूते पर होविशिका शिविर जैसे शिविरों का आयोजन कर पाए। यही वजह है जिसके कारण कार्यक्रम के 26 वर्ष पूरे होने के पश्चात भी आज जब तक एकलव्य शिविरों के प्रशासनिक और व्यवस्था संबंधी मसलों में दखल नहीं देता, होविशिका शिविरों के असफल होने की घोर आंशका बनी रहती है। इस स्थिति से कैसे निपटा जाए यह होविशिका के लिए अत्यंत विचारणीय मुद्दा है।

होविशिका की रीढ़ है फीड बैक

प्रशिक्षण का सबसे प्रमुख काम कक्षा संचालन है । सारा इंतजाम, सारी तैयारी इसी को अंजाम देने के लिए की जाती है । इसलिए यह स्वाभाविक है कि इसे हर तरह से पुख्ता बनाने की कोशिश की जाए । इस संबंध में एक महत्वपूर्ण कोशिश फीड बैक प्रणाली की है । जो इस प्रशिक्षण की जान है । यहीं से इसे आक्सीजन मिलती है, यहीं नया खून बनता है ।

प्रत्येक कक्षा में एक स्रोत व्यक्ति फीड बैक रिपोर्टर के रुप में उपस्थित होता है । इस व्यक्ति का काम है कक्षा कार्य के संबंध में रोजाना एक रिपोर्ट तैयार करना, जिसमें उस दिन की कक्षा की कार्य प्रणाली का बारीकी से विश्लेषण प्रस्तुत हो । फीड बैक रिपोर्टर की रिपोर्ट से निम्नलिखित अपेक्षाएं होती है -

क) कक्षा में संपन्न गतिविधि का संक्षिप्त विवरण ।

ख) स्रोत दल की कार्यप्रणाली, गतिविधियों आपसी संतुलन व सहयोग और चर्चा के दौरान अवधारणाओं की स्पष्टता आदि की समीक्षा ।

ग) प्रयोगों में और चर्चा में प्रशिक्षु शिक्षकों की भागीदारी।

घ) प्रयोग आदि करने में आई दिक्कतें, प्रशिक्षण व्यवस्था व किताब ।

च) चर्चा के दौरान उभरे महत्वपूर्ण प्रश्न, चाहे उत्तरित या अनुत्तरित ।

प्रतिदिन दोपहर में एक फीड बैक मीटिंग होती है । इसमें फीड बैक रिपोर्ट प्रस्तुत की जाती है और उस पर चर्चा होती है । चर्चा का मुख्य उद्देश्य होता है, कक्षा की परिस्थिति का जायजा लेना एवं स्रोत दल की भूमिका की समीक्षा करना । इस समीक्षा का प्रयोजन स्रोत दल के कामकाज को बेहतर बनाना होता है । कोई भी व्यक्ति फीड बैक रिपोर्टर हो सकता है पर यह अच्छा रहता है कि उस व्यक्ति को कार्यक्रम के विषय में जानकारी और समझ हो । किसी भी कक्षा का आकलन हमेशा किसी आदर्श की कसौटी पर किया जाता है । इसलिए फीड बैक रिपोर्टर की शिक्षा की अपनी अवधारणा बहुत महत्वपूर्ण होती है । मसलन, यदि फीड बैक रिर्पोटर की चिंता यही है कि बाल वैज्ञानिक कितनी समाप्त हुई है, या प्रयोग करवाने के बाद पुस्तक के सारे प्रश्नों के उत्तर लिखवा दिए गए या नहीं, तो वह कक्षा की कार्यवाही का आकलन इसी आधार पर करेगी/करेगा । यदि उसके आधार ज्यादा व्यापक हुए कि शिक्षकों की भागीदारी कैसी रही या सार्थक चर्चा किस हद तक हुई या निष्कर्ष किस ढंग से निकाले गए, तो आकलन का आधार भी बदल जाता है । दरअसल हमें एक समग्र आकलन की जरुरत होती है । इसलिए फीड बैक रिपोर्टरों के साथ भी लगातार चर्चाओं का सिलसिला चलता है । जैसे -शिक्षा, शिक्षण व प्रशिक्षण के बारे में, कार्यक्रम के बारे में, स्कूल प्रणाली, स्कूली परिस्थिति के बारे में, शिक्षकों की कार्य परिस्थितियों के बारे में उनकी समझ विकसित करने का सतत प्रयास चलता है ।

फीड बैक रिपोर्टरों की भूमिका को लेकर कई बार समस्याएं पैदा होती हैं । पहली समस्या तो यही सामने आती है कि कक्षा में उनकी स्थिति क्या है । यह समस्या इस परिप्रेक्ष्य में समझनी चाहिए कि प्रशिक्षण की हर प्रक्रिया या ढांचा किसी विशिष्ट पहलू को संपन्न करने की कोशिश

है । यह देखा गया है कि जब कभी भी इसको औपचारिक समझ के रुप में निरुपित किया जाता है, तो इसके जड़ हो जाने का खतरा बन जाता है । उस समझ की वैचारिक गतिशीलता खत्म हो जाती है । यही बात समय-समय पर फीड बैक के साथ भी हुई और हर बार उसे जड़ रीति उसके उद्देश्यों के अनुरुप बनाना पड़ा । पहले एक समझ यही रही थी कि आमतौर पर फीड बैक रिपोर्टर कक्षा संचालन में भाग नहीं लेंगे, वे मात्र अवलोकनकर्ता हैं । उन्हें (स्रोत दल समेत) पूरी कक्षा को देखना है और एक समग्र खाका खींचना है । यह उस समय भी एक जड़ समझ नहीं थी परंतु यदि इसे एक सिद्धांत के रुप में स्वीकार कर लिया जाए तो विसंगतियां पैदा होने लगती है। कई बार ऐसा हो जाता था कि कक्षा में कोई गंभीर गलती हो रही है, फीड बैक रिपोर्टर समझ रहे हैं, पर अवलोकनकर्ता बने बैठे हैं । बाद में आकर मीटिंग में बता रहे हैं । यह एक अजीब परिस्थिति है । फीड बैक का प्रमुख कार्य है कि कक्षा में शिक्षकों के साथ प्रक्रिया ठीक से हो और यहां फीड बैक रिपोर्टर कक्षा में तो कुछ नहीं कर रहे और बाद में उस पर चर्चा और छिछालेदार हो रही है । इस सब के बाद यह स्पष्ट हुआ कि आवश्यकता होने पर रिर्पोटर हस्तक्षेप कर सकते हैं । स्रोत दल सदस्य परेशान हो जाते क्योंकि कई बार उनकी योजना इस हस्तक्षेप के कारण चौपट हो जाती तब यह सोचा गया कि फीड बैक रिपोर्टर स्रोत दल तैयारी में भाग जरुर लें ताकि उन्हें स्रोतदल की योजना पता रहे और वे ज्यादा नपा तुला हस्तक्षेप कर सकें । खैर, ये समस्याएं हर वर्ष आती हैं और इनसे हर वर्ष निपटने का एक ही तरीका होता है, फीड बैक रिपोर्टरों को फीड बैक की भावना से परिचित कराना । और प्रक्रिया में नित नयापन व जीवतंता लाने का प्रयास करना ।

फीड बैक से जुड़ी एक और समस्या यह है कि अक्सर स्रोत दल इसे व्यक्तिगत आलोचना के रुप में लेकर बचाव में तर्क व अपनी मजबूरियां कहने लगते हैं। कई बार तो वह फीड बैक रिपोर्टर को झूठा भी बताने लगते हैं । इस सब से फीड बैक रिपोर्ट के मुद्दों पर चर्चा का माहौल न बनकर सफाई पेश करने का, आरोपों को नकारने का माहौल बनने लगता है । थोड़ा बहुत तो स्वाभाविक है परंतु कई बार यह बहुत ज्यादा हो जाता है और कड़वाहट में भी बदल जाता है । कई बार फीड बैक रिपोर्टर भी अपनी रिपोर्ट इस तरह पेश करते हैं कि वे आक्षेप लगने लगती है । इसके बारे में इतना ही कहा जा सकता है कि ये समस्याएं मुख्यतः फीड बैक का प्रयोजन न समझने के कारण पैदा होती हैं ।

एक बात यहां ध्यान देने योग्य है । फीड बैक रिपोर्टर और स्रोत दल के बीच का संबंध काफी अजीब सा रहा है। पर यह सब कुछ, आश्चर्यजनक रुप से फीड बैक मीटिंग तक ही सीमित रहता है । वहां (फीड बैक मीटिंग में) कभी-कभी तो तनाव इतना बढ़ जाता है कि लगता है स्थायी दरार बनकर रहेगी । परंतु मीटिंग के साथ ही यह समाप्त हो जाता है । यह चीज काफी आशा जगाती है कि कार्यक्रम से जुड़े लोगों ने फीड बैक की भावना को कहीं गहरे में पकड़ लिया है । एक समझ बनी है इसके उद्देश्य को लेकर ।

फीड बैंक मीटिंग

फीड बैक मीटिंग प्रशिक्षण का महत्वपूर्ण हिस्सा है । इसके दो पहलू हैं । एक तो यह कि कक्षाओं में हुए कार्य का मूल्यांकन करके आगे के लिए समझ बने । कहां कमी रह गई हैं, कब पूरा किया जाना है, आदि निर्णय हों । किसी कक्षा में यदि कुछ नया हुआ हो, विशेष हुआ हो, कोई खास प्रश्न उठा हो, संक्षेप में कोई नवाचार हुआ हो,

तो उसको दर्ज किया जाए । इसके अलावा वैज्ञानिक अवधारणाओं को लेकर, प्रयोगों को लेकर, विज्ञान के ज्यादा व्यापक सवालों को लेकर, शिक्षा की अवधारणा को लेकर स्रोत दल के अपने प्रशिक्षण का भी यह एक मंच है । फीड बैक मीटिंग का दूसरा महत्वपूर्ण पहलू है कि कक्षा में शिक्षक के अधिकार को खुली समीक्षा के दायरे में लाना ।

फीड बैक मीटिंग का तरीका यह है कि प्रत्येक कक्षा की फीड बैक रिपोर्ट पढ़ी जाती है और फिर पहले संबंधित स्रोत दल के सदस्य इस पर कुछ कहना चाहते हों तो कहते हैं । इसके बाद कुछ महत्वपूर्ण मुद्दों को चुन लिया जाता है और उन पर खुली चर्चा होती है । ये मुद्दे वैज्ञानिक अवधारणाओं या जानकारी से संबंधित भी हो सकते हैं, कक्षा की प्रक्रिया से संबंधित हो सकते हैं । कुछ ऐसे मुद्दे भी उठते हैं जिन पर तुरंत चर्चा करना संभव नहीं होता, जैसे विज्ञान के किसी प्रश्न पर । ऐसी स्थिति में एक या दो व्यक्तियों को जिम्मेदारी दे दी जाती है कि वे उस प्रश्न पर तैयारी करके अगली मीटिंग में प्रस्तुत करें ताकि सार्थक चर्चा हो सके । **फीड बैक मीटिंग के व्यवस्थित मिनट्स भी रखे जाते हैं जो बाल वैज्ञानिक पुर्नलेखन के समय बड़े काम आते हैं ।**

फीड बैक मीटिंग में कुछ दिक्कतें आती हैं । इनमें से कुछ का जिक्र तो ऊपर हुआ है । यहाँ सिलसिलेवार ये दिक्कतें और इनसे निपटने के लिए अपनाए गए तरीकों का संक्षेप में विवरण प्रस्तुत हैं -

(क) कई ऐसे प्रश्न हैं जो हर बार प्रशिक्षण के दौरान उठते ही हैं । चूंकि हर साल नए शिक्षक आ रहे हैं इसलिए ऐसा होना स्वाभाविक है । इन प्रश्नों पर फीड बैंक मीटिंग में कई बार चर्चा हो चुकी हैं परंतु हर वर्ष कुछ नए स्रोत शिक्षक होते हैं, कुछ नए वालन्टीयर होते हैं । इसलिए इन प्रश्नों पर फिर चर्चा छिड़ जाती है । इसमें कई बार मीटिंग अंतहीन हो जाती है और पुराने स्रोत दल के लिए उबाऊ भी । एक संतुलन बनाए रखने की दृष्टि से कारगर है क्योंकि इससे नए प्रश्नों पर चर्चा का भी मौका मिल जाता है ।

(ख) फीड बैक मीटिंगों में कई बार आक्रमण-बचाव वाला माहौल पैदा हो जाता है । इसको एक संवाद की शक्ल देने के ख्याल से कुछ तरीके अपनाए गए हैं । जैसे एक बार यह कोशिश की गई थी कि फीड बैक रिपोर्टर स्रोतदल टोली के सदस्य हों । फीड बैक मीटिंग में आने से पहले ये टोली आपस में चर्चा करें कि क्या-क्या प्रस्तुत किया जाना है । तात्पर्य यह है कि स्रोत दल टोली खुद ही अपने कार्य की एक समीक्षा प्रस्तुत करें । जहां यह एक आदर्श परिस्थिति में कारगर और शायद वांछनीय होगा, परंतु प्रस्तुत संदर्भ में इस पद्धति में फीड बैक का पैनापन खत्म होने लगा ।

इसी संबंध में एक दूसरी पद्धति भी अपनाई गई थी। फीड बैक रिपोर्टरों की एक बैठक मुख्य फीड बैक मीटिंग से पहले होती थी । इसमें एक या दो व्यक्ति माडरेटर के रुप में होते थे । फीड बैक मीटिंग में मॉडरेटर ही रिपोर्ट का प्रस्तुतीकरण करते थे । इससे समस्या कुछ हद तक हल हुई पर दूसरी दिक्कतें आई । मसलन फीड बैक रिपोर्टर को यह लगता कि मॉडरेटर ने उसकी बात को ठीक से प्रस्तुत नहीं किया या सारे मुद्दे प्रस्तुत नहीं किए,आदि। कई बार ऐसा भी लगता था कि रिर्पोट का पैनापन खत्म हो गया है या फीड बैक बुझी-बुझी सी हो गई है ।

बहरहाल कुल मिलाकर फीड बैक मीटिंग की प्रासंगिकता, शिक्षक प्रशिक्षण में इसकी भूमिका और नवाचार में इसके योगदान से इंकार नहीं किया जा सकता ।

फीड बैक से उभरे शैक्षणिक मुद्दे

शिविर के दौरान कक्षाओं में रोजाना पेश किए जाने वाले प्रतिवेदनों और फीड बैक बैठकों में होने वाली चर्चाओं ने कई अहम शैक्षणिक मुद्दों को उभारा । इन मुद्दों पर कार्य करने पर कार्यक्रम के शैक्षणिक पक्ष में कई गुणात्मक सुधार लाए जा सकते हैं । होशंगाबाद में 1998 के प्रशिक्षण शिविर में अध्यायों को लेकर जो मुद्दे उभरे उनमें से कुछ इस प्रकार रहे -

1) आकाश की ओर

प्रशिक्षण शिविरों में शिक्षकों के साथ इस अध्याय को करने में काफी दिक्कतें आती हैं । ऐसा अधिकांश स्रोत दल सदस्यों का मत था । मात्र प्रयोगों द्वारा मूल अवधारणा स्पष्ट नहीं हो पाती, और चर्चाएं अधिकांशतः कठिन और भटकाऊ हो जाती है । लिहाजा शिक्षकों को भी यह अध्याय बच्चों के साथ करवाने में काफी परेशानी होती है। फीड बैक मीटिंग में सुझाव उभरे कि -

(अ) इस अध्याय की विस्तृत समीक्षा और परीक्षण की जरुरत है । जिससे यह तय हो सके कि -

(1) अध्याय में क्या रखा जाना चाहिए और क्या नहीं ।

(2) जितना हिस्सा रखा जाना चाहिए उसे और अधिक आसान और स्पष्ट कैसे बनाया जाए ।

(3) इस अध्याय की अवधारणाओं को बेहतर समझाने में क्या किन्हीं त्रिआयामी मॉडलों की मदद ली जा सकती है ।

ब) प्रायः सभी स्रोतदल सदस्यों का यह मत था कि इस अध्याय को पाठ्यक्रम से हटाया तो नहीं जाना चाहिए। लेकिन इस पर नए सिरे से विचार करने की जरुरत जरुर है।

कक्षाओं के प्रतिवेदन रपटों से उभरे कुछ सवाल फीड बैक मीटिंग में भी अंत तक अनुत्तरित रह गए थे । यह सवाल है -

1 सौर घड़ी कैसे काम करती है ?

2 साल भर में आकाश में सूरज का पथ ऐसा क्यों दिखाई देता है, ऐसा क्यों नहीं ?

3. उत्तरायण और दक्षिणायन की अवधारणाओं को किस तरह समझाया जाए ?

4. अध्याय में एक जगह (पृ.क्र. 167) पर सूरज का स्थान नोट करने के लिए कहा गया है । साथ ही यह भी कहा गया है कि यह अवलोकन सितंबर अक्टूबर या मार्च अप्रैल के दिनों में लेना ठीक रहेगा । ऐसा क्यों ?

2) चीजें क्यों तैरती है ?

अध्याय पर निम्नलिखित टिप्पणियां और सुझाव दिए गए -

1. अध्याय में पेज संख्या 94 पर घनत्व की जगह घना शब्द का इस्तेमाल किया गया है । इस लफ्ज के उपयोग के कारण बच्चों के मन में यह भ्रम हो सकता है कि घना का मतलब कणों का पास-पास होना है । इसके बाद भी घनत्व शब्द कहीं नहीं आता है । और पेज क्र.95 पर अचानक आपेक्षिक घनत्व की बात होती है । इस किस्म के प्रस्तुतिकरण में सुधार की आवश्यकता है । लोगों का मत था कि -

(क) प्रश्न 10 के बाद आए कथन - लोहा लकड़ी से

अधिक घना है के तुरंत बाद लिखा जाए यानी लोहे का घनत्व लकड़ी से अधिक है । (ख) आपेक्षिक घनत्व की बात करने से पहले घनत्व की परिभाषा भी दी जा सकती है ।

2. पेज क्र. 107 पर दी गई तीसरी पहेली को बदल कर ऐसे कर दिया जाए -

पहली की तुलना में दूसरी और तीसरी परिस्थितियों में से पानी का तल किसमें अधिक होगा ?

3. अध्याय में कहीं तैरती हुई विभिन्न चीजों के कम ज्यादा डूबने की बात होनी चाहिए । मसलन, इस तरह के सवाल पूछे जा सकते हैं 'क' 'ख' 'ग' और 'घ' समान आकार की चीजें हैं । तो 'क' 'ख' 'ग' और 'घ' कम ज्यादा क्यों डूबे हुए हैं ? 'क' भारी है या 'घ' ?

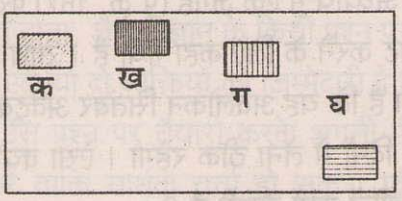

अनुत्तरित प्रश्न - अगर दो एकदम समान आपेक्षिक घनत्व के द्रवों को परखनली में डालें तो क्या होगा ?

(3) वृद्धि

1. इस अध्याय में प्रस्तुत वृद्धि की अवधारणा से ऐसा समझ में आता है वृद्धि का अर्थ है केवल लंबाई में वृद्धि । यह समझ अधूरी है । पौधों के तनों की मोटाई के बढ़ने को भी वृद्धि कहा जाता है । अतः इस अध्याय में एक ऐसे प्रयोग जोड़ने पर विचार करना चाहिए जिसमें बच्चों को पौधों की लंबाई की जगह तने की मोटाई नापनी हो । साथ ही शिक्षकों के स्तर पर वृद्धि के बारे में और जानकारी उपलब्ध करवाना भी लाभदायक रहेगा ।

2. चर्चा में उभरे निम्नलिखित प्रश्नों के संतोषप्रद जवाब नहीं खोजे जा सके -

1. हमारे कुछ बाल दो मुंहे कैसे हो जाते हैं ?

2. कुछ बाल आधे काले, आधे सफेद क्यों और कैसे हो जाते हैं ?

3. क्या सभी एक बीजपत्री पौधों में अंकुरण पश्चात बीजपत्र जमीन के नीचे रह जाते हैं ?

(4) विद्युत -2

1. प्रयोग 7 में पानी के सुचालक या कुचालक होने का पता लगाया जाता है । इस प्रयोग से यह निष्कर्ष निकलता है कि पानी कुचालक है, जबकि शिक्षक अपने रोजमर्रा के अनुभवों से यह जानते हैं कि पानी सुचालक होता है । अतः अधिकांश शिक्षक, खासतौर पर जिनकी भौतिकी में सीमित दखल होती है, भ्रम में पड़ जाते हैं । इसलिए फीड बैक मीटिंग में यह सुझाव उठा कि प्रशिक्षण शिविरों में इस प्रयोग को करवाते समय शिक्षकों के समक्ष चालकता की अवधारणा को वोल्टेज और मापन की संवेदनशीलता के संदर्भ में पेश किया जाना चाहिए।

2. प्रयोग 9 (पोटेशियम आयोडाइड में से मुक्त आयोडीन) में आटे के घोल की जगह अगर गोंद के घोल का इस्तेमाल किया जाए तो निष्कर्ष ज्यादा अच्छे निकलते हैं ।

3. श्रेणी और समान्तर क्रम के प्रयोगों में सभी बल्ब एक जैसे नहीं जलते । इससे शिक्षक और बच्चे विद्युतधारा के बारे में अक्सर गलत निष्कर्ष निकाल बैठते हैं । जैसे कि विद्युतधारा परिपथ के एक छोर से दूसरे छोर तक जाने में खर्च हो जाती है । अतः यह सुझाव उभरा कि शिक्षकों के साथ इन प्रयोगों को करवाने से पहले बल्बों को परख कर लगभग समान रोशनी वाले बल्बों को चुन लेना चाहिए । फिर सारे प्रयोग इन्हीं बल्बों से करवाने

चाहिए । इसके बाद शिक्षकों को अलग-अलग रोशनी वाले बल्बों से भी इन प्रयोगों को करवा कर इस समस्या से भी अवगत करा देना चाहिए ।

(5) विद्युत - 3

1. प्रयोग 2 में करंट का चुंबकीय प्रभाव सुई के विचलन के द्वारा देखा जाता है । परिपथ के तारों को सुई पर तीन तरीकों से रखा जाता है -

(क) दोनों तार ऊपर (ख) दोनों तार नीचे (ग) एक तार ऊपर एक नीचे

(क) और (ख) परिस्थितियों में दोनों की चुंबकीय सुई से दूरी समान होनी चाहिए । ऐसा न होने पर परिपथ में करंट बहने पर सुई में थोड़ा सा विचलन होता है, जबकि प्रयोग की परिकल्पना के अनुसार इन दोनों परिस्थितियों में विचलन नहीं होना चाहिए । तारों की दूरी, जैसे की किताब के चित्रों में प्रस्तुत की गयी है, सुई से एक समान रख पाना मुश्किल होता है । इस कारण से इस प्रयोग का मूल उद्देश्य अक्सर पूरा नहीं हो पाता । इस समस्या से निपटने के लिए सुझाव यह है कि पेज क्र. 153 पर दिए गए इस प्रयोग के चित्रों में इस प्रकार का सुधार कर देना चाहिए ।

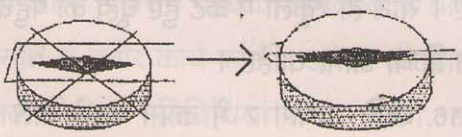

2. अध्याय के अंत में विद्युत मोटर का जो मॉडल दिया गया है उसके आधार पर मोटर बनाना शिक्षकों के लिए कठिन पड़ता है । इसकी तुलना में अरविंद गुप्ता वाला मॉडल अधिकांश शिक्षक बनाने में सफल हुए । इसलिए यह सुझाव था कि अध्याय में भी वर्तमान मॉडल को हटाकर अरविंद गुप्ता वाला मॉडल डाल दिया जाए । हालांकि कुछ स्रोत शिक्षकों का यह मत जरुर था कि वर्तमान मॉडल से विद्युत चुंबकीय सिद्धांतों को ज्यादा अच्छी तरह समझा जा सकता है ।

3. अध्याय में दर्शाए गए स्विच अक्सर ठीक से नहीं बन पाते । लिहाजा हमें कुछ विकल्प तलाशने चाहिए ।

(6) पृथक्करण - 2-अध्याय की शुरुआत में दी गई सावधानी गैर जरुरी है ।

2. प्रयोग 3 में अक्सर देखा जाता है कि स्याही के पानी को गर्म करने पर पानी का रंग उड़ जाता है । यह रंग अम्ल डालने पर वापस आ जाता है । अतः यह प्रयोग पोटेशियम परमेंगनेट के घोल से किया जाए तो बेहतर रहेगा ।

(7) जंतुओं की दुनिया- 1. यह अध्याय कक्षा में किस प्रकार हो पाएगा यह इस बात पर काफी निर्भर करता है कि परिभ्रमण के दौरान कौनसे जंतु प्राप्त हुए हैं। अतः इस अध्याय पर पुनर्विचार जरुरी है ।

8. फूल और फल- फीड बैक मीटिंग में इस अध्याय पर चर्चा के दौरान दो उपयोगी एवं रोचक जानकारियां उभर कर आई । पहली, फूल में वर्तिकाग्र जितने भागों में बंटा होता है या अंडाशय में जितने प्रकोष्ठ होते हैं फूल में उतने ही स्त्रीकेसर होते हैं। दूसरी, नींबू और मौसम्बी के फलों की हर फांक एक स्त्रीकेसर से बनी होती है ।

9. समय और दोलक- अध्याय के आखिरी भाग में दो दोलकों को धागे से जोड़कर एक दोलक के दूसरे पर प्रभाव के अध्ययन के लिए एक प्रयोग है । फीड बैक मीटिंग में यह प्रश्न उठा कि इस प्रयोग में एक दोलक दूसरे दोलक में कंपन कैसे प्रेरित करता है । यह सवाल अनुत्तरित ही रह गया ।

10. प्रकाश- एक स्रोतदल सदस्य का यह सुझाव

था कि पिन होल कैमरा एक के ऊपर एक चढ़ सकने वाले बेलनाकार या टूथपेस्ट के डिब्बों से बना कर देखना चाहिए ।

11.गैसें - 1. प्रयोग 15 में एक जलती हुई मोमबत्ती को अलग-अलग आयतनों के बर्तनों से ढक कर बूझने में लगा समय देखा जाता है । प्रयोग की परिकल्पना के अनुसार अलग-अलग आयतनों के साथ बूझने में लगा समय भी फर्क आना चाहिए । पर शिक्षकों के साथ यह प्रयोग करवाते वक्त महसूस हुआ कि जब तक बर्तनों के आयतनों में बहुत अधिक अंतर नहीं होता, समय में कोई खास फर्क देखने को नहीं मिलता।यह प्रयोग के प्रस्तुतिकरण की कमी है, जिसे सुधारने की आवश्यकता है ।

2. कार्बन डाइऑक्साइड गैस बनाने के लिए अध्याय में दिए मंहगे उपकरणों, जैसे उफननली, कांच की नली, आदि के उपयोग की बजाए इंजेक्शन की शीशी, रीफिल और वॉलट्युब का उपयोग अत्यंत सुविधा के साथ किया जा सकता है ।

3. प्रयोग 4 में ग्लूकोज बोतल की जगह उफननली का भी उपयोग किया जा सकता है ।

12. हवा- प्रयोग 8 में अगर आधे भरे गिलास का उपयोग किया जाए तो भी प्रयोग हो जाता है । पर क्यों,उसका जवाब शिविर के दौरान ढूंढा नहीं जा सका।

2. हैंडपंप, फाउंटेन पैन, ड्रॉपर और रीफिल से भी बनाए जा सकते हैं । इस गतिविधि को अध्याय में जोड़ा जा सकता है ।

13. श्वसन- 1. प्रयोग 2 में श्वसन दर मालूम की जाती है । इस प्रयोग को करने में यह समस्या आती है कि जिस व्यक्ति की श्वसन दर नापी जा रही होती है वह अक्सर प्रयोग के कारण अपनी स्वाभाविक दर पर सांस नहीं ले पाता । इस वजह से कभी-कभी दो लोगों की श्वसन दर में काफी अंतर आ जाता है।

13. **सजीव ओर निर्जीव**- इस अध्याय के प्रश्न 10 से 14 में मनुष्यों में वृद्धि को सिर्फ कद में बढ़ोत्तरी से जोड़ा गया है । हालांकि वृद्धि अध्याय में वृद्धि की यही अवधारणा पेश की गई है, यह पूर्णतः सत्य नहीं है । वजन और चौड़ाई में भी वृद्धि के उदाहरण है ।

14. **संयोग और संभाविता**- संयोग और संभाविता की अवधारणा को अधिकांश शिक्षण प्राप्त करने के बाद भी ठीक तरह से समझ नहीं पाते ऐसा स्रोत दल का अनुभव रहा है । लिहाजा यह सोचने का गंभीर मुद्दा है कि बच्चों को इस अध्याय से क्या समझ में आता है । अतः इस अध्याय पर मूलभूत किस्म के पुनः विचार करने की जरुरत है । साथ ही यह भी सोचने की जरुरत है कि अध्याय की अवधारणाओं को शिक्षकों को किस विधि से सबसे अच्छा समझाया जा सकता है ।

15. **शरीर के आंतरिक अंग - 1 और 2**

यह दोनों अध्याय काफी लंबे हैं । एक सुझाव था कि हरेक तंत्र को एक अलग अध्याय के रुप में प्रस्तुत करना चाहिए । साथ ही स्कूलों में कटे हुए चूहों को पहुंचवाने का प्रयास किया जाना चाहिए ।

16. **ध्वनि**- प्रयोग 7 में कंपन करने वाले तार की लंबाई और आवाज के मोटे या तीखे होने के संबंध को समझना होता है। पर अक्सर यह बात आती है कि तार की लंबाई को बदलने पर तार का तनाव भी बदल जाता है जिसका प्रभाव ध्वनि पर भी पड़ता है । इसलिए प्रयोग में बताए तानपूरे की डिजाइन में ऐसे सुधार की आवश्यकता है जिससे लंबाई बदलने पर भी तनाव स्थिर रहे ।

प्राशिका : उन्मुखीकरण शिविर

एकलव्य के प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम यानी प्राशिका का सूत्रपात वर्ष 1985 में हुआ था। मिडिल स्कूल के बच्चों में पढ़कर समझने व लिखने के हुनर का जो स्तर था उसे लेकर गहरी चिंता, या यो कहें कि निराशा थी। कई परीक्षणों व सर्वेक्षणों के जरिए बच्चों की क्षमताओं को समझने की कोशिश की गई। और भाषा व गणित पर काम कर रहे समूह ने वर्ष 1987 में शासकीय पाठ्यक्रम के स्थान पर प्राशिका कार्यक्रम लागू किया गया। वर्तमान में यह कार्यक्रम बैतूल जिले के शाहपुर विकांस खण्ड की सभी प्राथमिक शालाओं में चलाया जा रहा है। यहां प्रस्तुत है प्राशिका के उन्मुखीकरण शिविर पर जानकारी -

प्राशिका एक खुले व लचीले पाठ्यक्रम की बात करता है। पाठ्यक्रम की एक मोटी-मोटी रुपरेखा ही निर्धारित की गई है। ऐसे कोई विशिष्ठ अभ्यास या चरण निर्धारित नहीं किए गए हैं जो बच्चे को पढ़ना, सीखने या गणितीय हुनर हासिल करने में समर्थ बनाएं। गतिविधियां और अभ्यास विकसित करना तथा जरुरत होने पर जानकारी देना शिक्षक को करना चाहिए और वे सक्षम हैं। एक मायने में साथी पाठ्य सामग्री पुस्तक में नहीं दी गई है। यह उम्मीद है कि जो कुछ पाठ्य सामग्री के माध्यम से पूरा किया जाना है उसमें शिक्षक जानकारी व ज्ञान के आंशिक स्रोत के बतौर कार्य करेंगे। अपेक्षा की जाती है कि शिक्षक विभिन्न गतिविधियां तैयार करेंगे, उनके क्रियान्वयन का ध्यानपूर्वक अवलोकन करेंगे और फीड बैक के आधार पर गतिविधियों में बदलाव व रद्दोबदल करेंगे। बच्चे के समान ही, शिक्षकों की सृजनशीलता में भी प्राशिका की गहरी आस्था है। शिक्षक से उम्मीद है कि वे सीखने वालों की सामान्य जरुरतों का आकलन भी करेंगे और साथ ही निजी विकास हेतु उपयुक्त अवसर भी उपलब्ध कराएंगे।

कार्यक्रम की अपेक्षा है कि बच्चे सक्रिय रहें और कक्षा की गतिविधियों से संबंधित निर्णयों में भागीदार हों। शिक्षक को सीखने की प्रक्रिया में भागीदार और मार्गदर्शक (अगुआ) साथ-साथ होना पड़ेगा। इसके लिए उसे चित्र बनाने, गाने, खेलने, नकल उतारने आदि को लेकर जो झिझक है, उन्हें छोड़ना होगा। उसे बच्चों के मिजाज के प्रति संवेदनशील होना पड़ेगा तथा मुश्किल हालातों में भी सीखने को एक आनंददायक व सार्थक गतिविधि बनाना होगा।

उन्मुखीकरण कार्यक्रम के उद्देश्य

प्राशिका के शिक्षक उन्मुखीकरण कार्यक्रम के प्रमुख उद्देश्य हैं -

1. शिक्षकों में सीखने की प्रक्रिया को लेकर जागरुकता पैदा करना और रवैये में बदलाव लाना।
2. हुनर व आत्मविश्वास जगाना।

3. ज्ञान हासिल करने में शिक्षकों की मदद करना ।

4. पाठ्यक्रम को कार्यरुप देने के लिए जरुरी कामकाजी हुनर विकसित करना ।

5. शिक्षकों की मदद करना ताकि वे स्वयं के लिए अनौपचारिक शोध कर सकें ।

उन्मुखीकरण कार्यक्रम के बुनियादी पहलू

प्रशिक्षक बनाम् स्वशिक्षण - शिक्षकों के साथ अंतर्क्रिया को प्रशिक्षण की बजाए उन्मुखीकरण नाम दिया गया है । प्रशिक्षण का तात्पर्य यह होता है कि प्रशिक्षक प्रशिक्षणार्थियों को ज्ञान व हुनर का पुलिंदा प्रदान कर देंगे । प्राशिका में शिक्षकों के प्रति इस तरह के दानदाता नजरिये को तिलांजलि दे दी गई है । प्राशिका में यह भी नहीं माना जाता कि पांच तक 20-20 दिन के पांच वर्षों संपर्क होने से प्रशिक्षण की इतिश्री हो जाती है । वास्तव में शिक्षक प्रशिक्षित तो तब होता/होती है, जब वह कक्षा के माहौल में जाकर विभिन्न चीजों को आजमाता/आजमाती है और अपने तजुर्बे से सीखता/सीखती है । हमारा कार्य शिक्षकों को मात्र खुद अपने अनुभवों से सीखने का रुझान देता है। इसलिए हालांकि यहां प्रशिक्षण शब्द का इस्तेमाल किया जा रहा है, मगर यह है उन्मुखीकरण ।

बकौल एक प्राशिका सदस्य

इस उन्मुखीकरण का एक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि इसमें कोई व्याख्यान नहीं होते । इसकी बजाए स्रोत व्यक्तियों समेत हर व्यक्ति गतिविधि में भाग लेता/लेती है।लिहाजा चर्चा का आधार या तो तात्कालिन अनुभव होता है या (जैसे बचपन के) अनुभवों की स्मृति होती है या फिर कोई चित्रण (मसलन भूमिका निर्वाह) होता है ।

उन्मुखीकरण के दौरान लोगों को गतिविधियों पर काम करते या चीजें बनाते देखा जा सकता है । इसके बाद चर्चा, विश्लेषण का दौर आता है । इसमें चीजें बटोरना, जानकारी जुटाना, मापन, ऐसे खेलकूद में भाग लेना जो दिमाग पर जोर डालें, गणित के सवाल और पहेलियां बूझना, कविता-कहानियां पढ़ना, पुस्तकालय में खोजना, भाषा का अभ्यास करना, भाषा के अभ्यास हेतु खेल खेलना, अभिव्यक्ति, व्याकरण, मात्रात्मक कार्य आदि शामिल हैं ।

इनके साथ-साथ अन्य इनपुट भी हैं । उदाहरण के लिए शिक्षाविदों की रचनाएं, उनके लिखे पोजीशन परचे, अन्य प्रयासों के विवरण आदि पढ़े जाते हैं, उन पर चर्चा होती है तथा शिक्षकों के अपने स्कूलों के संदर्भ में उनका विश्लेषण किया जाता है ।

इन सबके लिए स्रोत व्यक्तियों में इस सूझबूझ की जरुरत होती है कि कब जानकारी दें, कब खाली स्थान छोड़ दें और लोगों को सोचने को उकसाएं ।

सृजन क्षमता को उकेरना - कक्षा में उपयोग हेतु नए विचार या सामग्री निर्माण में लोगों द्वारा किए जाने वाले प्रयासों की परस्पर सराहना को प्राशिका में बढ़ावा दिया जाता है । इससे बच्चों के लिए गतिविधियां तैयार होती हैं, पता चलता है कि उनसे क्या सीखा जा सकता है, बिंदु विशेष के लिए विशिष्ट गतिविधियों का जुगाड़ किया जाता है और उन्हें कक्षा में कार्यरुप देने के तौर तरीकों पर विचार-विमर्श होता है । इसे अंजाम देने के लिए जरुरी है कि छोटे-छोटे समूहों में अनौपचारिक रुप से कामकाज किया जाए ।

बराबरी - प्राशिका में स्रोत व्यक्तियों और शिक्षकों के

बीच बराबरी लाने के संजीदा प्रयास किए जाते हैं । यह बहुत जरुरी है कि पूरे दिन भर, कक्षा में व कक्षा से बाहर पूर्णकालिक अंतर्क्रिया हो । स्रोत व्यक्तियों व शिक्षकों, दोनों के दिमाग में एक छबि होती है जिसके मुताबिक स्कूल शिक्षकों की तुलना में विश्वविद्यालय के शिक्षक वे शोधकर्ता कुदरती तौर पर ज्यादा उत्कृष्ट होते हैं । ऐसे अवरोधों को पार करना आसान नहीं है ।

एक ओर शिक्षकों को यह विश्वास दिलाना कठिन होता है कि वे अपने अनुभव व ज्ञान के जरिए काफी जानते हैं तथा दूसरी ओर स्रोत व्यक्तियों को भी यह जतलाना उतना ही कठिन है कि वे भी इन शिक्षकों से कुछ सीख सकते हैं । इस संदर्भ में भाषा एक महत्वपूर्ण कारक हो सकती है । शिक्षा-जगत में शिक्षा संबंधी चर्चाएं आमतौर पर अंग्रेजी में होती हैं तथा स्रोत व्यक्तियों को यह भी पता नहीं होता कि शिक्षकों के साथ एक संवाद बनाने में किस मुहावरे का उपयोग करें । न ही उनमें इतनी विनम्रता और कुशलता होती है कि वे स्कूल शिक्षकों के अनुभवों को समझ सकें या आत्मसमान कर सकें । इन अवरोधों को तोड़ने में सचमुच बहुत समय लगता है ।

एक बार यह झिझक समाप्त हो जाए और विभिन्न क्रिया-कलापों में सहज रुप से बराबरी स्थापित हो जाए तो स्रोत व्यक्तियों, समूह के सदस्यों और शिक्षकों की अंतर्क्रिया के परिणाम सचमुच धमाकेदार हो सकते हैं । दरअसल प्राशिका शिक्षक उन्मुखीकरण शिविरों में ऐसी कई गतिविधियां विकसित की गई हैं जिनसे शिविर के विभिन्न सहभागियों के बीच के इन अवरोधों को तोड़ने में मदद मिलती है ।

ब्रीविंग बनाम उबाल - प्राशिका में उन्मुखीकरण को एक (BREWING) के रुप में देखा गया है जिसमें आप कोशिश करते हैं कि सही माहौल बने, उपयुक्त इनपुट डाले जाएं और चीजों को अपनी गति से चलने दिया जाए । यह नहीं कि दबाव डालकर लोगों पर मत थोपे जाएं । अतः उन्मुखीकरण कार्यक्रम की योजना लचीली होनी चाहिए । समूह विशेष की जरुरतों के मद्देनजर इसमें निरंतर संशोधन की गुंजाइश होनी चाहिए ।

फीड बैक - उन्मुखीकरण कार्यक्रम के दौरान कई स्रोतों से, मूलतः अनौपचारिक रुप से फीडबैक प्राप्त किया जाता है । फीडबैक खुद शिक्षकों से तथा स्रोत व्यक्तियों व प्रेक्षकों से मिलता है ।

अनुवर्तन - मासिक गोष्ठियां, कक्षा का दौरा, उन्मुखीकरण पश्चात चर्चाएं आदि प्राशिका शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम के अनिवार्य अंग हैं । इन्हीं गोष्ठियों व कक्षा के दौरों के दौरान अगले शिविर का कार्यक्रम बनता है तथा शिक्षण सामग्री में संशोधन हेतु महत्वपूर्ण फीडबैक प्राप्त होता है ।

एक प्राशिका सदस्य ने टिप्पणी की

प्राशिका की भावना और होविशिका की भावना एक ही है । अन्य चीजों के अलावा होविशिका ने शिक्षक प्रशिक्षण का भी एक मॉडल बनाया । भावना, दर्शन और ढाँचों के संदर्भ में होविशिका और प्राशिका में कई समानताएं हैं । कुछ अहम् भिन्नताएं भी हैं । मसलन होविशिका का प्रशिक्षण इकाई आधारित है जबकि प्राशिका प्रशिक्षण में खुला छोड़ा गया है ।

विज्ञान प्रशिक्षण में उच्च शिक्षा व शोध संस्थानों की भूमिका

□भोलेश्वर दुबे

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था को हम प्राथमिक,माध्यमिक,. उच्चतर माध्यमिक तथा महाविद्यालयीन या विश्वविद्यालय स्तरों में बंटा हुआ पाते हैं । सतही तौर पर यह विभाजन प्रशासनिक व्यवस्था तथा छात्रों के उत्तरोत्तर हो रहे सर्वांगीण विकास के मद्देनजर किया गया प्रतीत होता है, किंतु इस विभाजन का दुष्परिणाम यह देखने में आ रहा है कि हर स्तर की अपनी सीमा रेखाएं खींच गई है, प्राथमिक स्तर का शिक्षक माध्यमिक या उच्चतर माध्यमिक स्तर की चर्चा करने से कतराता है, वहीं विश्वविद्यालय या महाविद्यालयीन शिक्षक उच्चतर माध्यमिक या माध्यमिक स्तर की चर्चा करने में शर्मिंदगी महसूस करता है ।

ऐसा क्यों हुआ ? क्या शिक्षा एक सतत प्रक्रिया नहीं ? क्या शिक्षा को समग्र रुप में नहीं देखा जाना चाहिए ? ये कुछ प्रश्न बरबस ही मन में उठ खड़े होते हैं जब विभिन्न स्तरों पर लगभग समान कार्य कर रहे शिक्षकों के बीच अहं की मोटी-मोटी पथरीली लकीरें खींची हो और अकादमिक संवादहीनता का माहौल हो ।

होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम ने संबंधों की जड़ता समाप्त करते हुए विभिन्न स्तरों पर कार्यरत शिक्षक को प्रोत्साहित कर शिक्षकों, प्राध्यापकों व वैज्ञानिकों के बीच स्थाई रिश्ते कायम करवाने का महत्वपूर्ण कार्य किया है।

इस विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम को अपने शैशवकाल से ही दिल्ली विश्वविद्यालय,टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ फंडामेंटल रिसर्च, आई.आई.टी. ,क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय का पूरा सहयोग मिला है । कालांतर में राष्ट्रीय शोध संस्थानों ने भी अकादमिक भागीदारी निभाई, जो अब तक जारी है।

यह एक मात्र ऐसा कार्यक्रम है जिसमें माध्यमिक शाला के अध्यापक तथा विश्वविद्यालयीन प्राध्यापक की समान भूमिका है । प्रशिक्षण के दौरान दोनों स्रोत शिक्षक ही है, कक्षा का संचालन कोई भी करे इसमें यहां कोई फर्क नहीं पड़ता । हां, एक दिन पूर्व अध्याय की तैयारी जरुरी होती है । विगत कुछ वर्षों से महाविद्यालयीन शिक्षक प्रशिक्षण के दौरान कक्षा की सीधी कमान संभालने के बजाए कक्षा में उठे प्रश्नों के समाधान व स्रोत शिक्षक के सहायक की जिम्मेदारी निभाने लगे हैं । क्योंकि होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम से जुड़े शिक्षकों की एक पूरी पीढ़ी अब तक कुशल स्रोत शिक्षक के रुप में अपनी पहचान बना चुकी है ।

प्रशिक्षण की रीढ़ है " फीड बैक"। प्रशिक्षण के दौरान दिन भर कक्षाओं की घटनाओं का लेखा-जोखा फीड बैक में होता है । कहने को यह लेखा जो है मगर सच मानिए यह बुद्धिजीवियों के लिये मखमली लालमिट्टी बिछे अखाड़े से कम नहीं । मुझे आज भी 1988 का क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय भोपाल का प्रशिक्षण याद है, जहां फीड बैक के दौरान घंटों एक ही समस्या पर विचार विमर्श होता रहा । मुझे स्थितियों में कोई खास परिवर्तन दिखाई नहीं देता, वही विषय है, बल-भार, नक्शा बनाना, चुम्बक, विद्युत,पानी-मृदु कठोर या पौधों में प्रजनन इन्ही अध्यायों से जुड़े सवालों पर पूरा समूह जुटा रहता था । इसका मतलब तो यह होना चाहिए कि इन अध्यायों में

तो अब कुछ समस्या शेष ही न होगी, क्योंकि इतनी मेहनत जो हुई । सही है, मेहनत हुई, कई समस्याएं सुलझी नई प्रायोगिक विधियां ईजाद हुई । अध्याय का स्वरुप बदला, पुस्तक के नए संस्करण आए किंतु हर प्रशिक्षण शिविर में इन्हीं अध्यायों को लेकर कुछ नए अनसुलझे प्रश्नों की सौगात लेकर हमारा शिक्षक फीड बैक में उपस्थित रहता है । यही इस प्रशिक्षण की सफलता का रहस्य है । यहां शिक्षक चिंतन के धरातल पर खरा उतरा है । वह एक ही चीज के कई आयामों को परखने में सक्षम हुआ है । उसके स्वयं के अनुभव व अवलोकन के लिए पैनी नज़र उसे इस योग्य बना देती है कि हर बार वह कुछ चुनौती पूर्ण प्रश्न और कुछ समाधान लेकर आता है । महाविद्यालयीन शिक्षक तो बस उन्हें इस हेतु प्रेरित भर करते हैं । यही सतत् शिक्षा व समग्र शिक्षा की नींव है ।

हर प्रशिक्षण शिविर में उठे अनगिनत प्रश्नों एवं विषय की व्यवस्थित समझ विकसित करने की दृष्टि से पुराने स्त्रोत शिक्षकों ने विशेष प्रशिक्षण के आयोजन का प्रस्ताव रखा । इस प्रस्ताव का स्वागत हुआ और विगत वर्षों से दस दिन का स्रोत दल प्रशिक्षण आयोजित हो रहा है । इसके दौरान रसायनशास्त्र में रासायनिक अभिक्रियाओं के सिद्धांत व रासायानिक साम्य प्रयोगों द्वारा समझने की कोशिश हुई । भौतिकी व इलेक्ट्रॉनिक्स में कठिन माने जाने वाले प्रयोग सरल विधियों, सुलभ उपकरणों से हुए । जीवशास्त्र में भी जैविक क्रियाएं, प्रायोगिक विधियां तथा आनुवांशिकी के मूल नियमों की समझ इन कार्यक्रमों के द्वारा बन पाई है । महाविद्यालयीन शिक्षकों व वैज्ञानिकों की इस कार्यक्रम में अहं भूमिका रही है । विषयवस्तु के चयन से लगाकर कार्यक्रम संचालन का पूरा दायित्व प्राध्यापकों ने सहर्ष स्वीकार किया।व इन शिविरों के परिणाम अत्यंत उत्साह वर्द्धक रहे हैं और भविष्य में कुछ नये विषयों का समावेश करना भी प्रस्तावित है।

महाविद्यालयीन व विश्वविद्यालयीन शिक्षकों के व्यक्तिगत अकादमिक योगदान के अतिरिक्त उच्चशिक्षा संस्थाओं ने ग्रंथालय, प्रयोगशालाएं, उपकरण तथा अन्य संसाधन उपलब्ध करवाकर इस कार्यक्रम को पोषित किया।

प्रशिक्षण शिविरों के दौरान सांध्य व्याख्यान माला में विज्ञान के क्षेत्र में हो रही शोध, जनविज्ञान, तथा समाज शास्त्रीय विषयों पर स्वयं सेवी संस्थाओं से जुड़े विद्वानों के अतिरिक्त महाविद्यालयीन व विश्वविद्यालय शिक्षकों ने अपने यथार्थवादी दृष्टिकोण से शिक्षकों को अवगत करवाया है ।

आज आवश्यकता इस बात की है कि विज्ञान शिक्षण में नवाचार के हिमायती, अकादमिक रुचि रखने वाले प्राध्यापक साथी इस कार्यक्रम से जुड़े और विज्ञान शिक्षण को दकियानूसी, पुस्तकीय ज्ञान से बाहर निकाल कर विज्ञान सीखने और सिखाने के आनंद का अनुभव करें और करवाएं। विज्ञान के प्रति कठिन शुष्क विषय, चमत्कार आदि जैसी अवधारणाएं अब समाप्त हों, इसके लिए होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण जैसे कार्यक्रम को शासन, उच्चशिक्षा संस्थानों और शिक्षा से जुड़ी स्वयं सेवी संस्थाओं को एक जुट हो अपना पूरा-पूरा योगदान देना होगा ।

भोलेश्वर दुबे
सहा. प्राध्यापक
शा.के.पी. कॉलेज, देवास

शैक्षिक प्रशिक्षण का गिरता स्तर और घटती रुचि

☐ यतीश कानूनगो

यह निर्विवाद है कि शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण अनिवार्य है। किसी समय तक यह परंपरा रही कि प्रशिक्षित शिक्षक ही नौकरी में आते थे या आ जाने के बाद प्रशिक्षण प्राप्ति अनिवार्य हो जाती थी । प्रशिक्षण हेतु न जाने वालों की वेतन वृत्तियां भी रुकी है ।

सेवाकालीन जीवन में एक बार के प्रशिक्षण की अपर्याप्तता स्वीकारते हुए बढ़ते ज्ञानसार, बदलती शैक्षिक विधाएँ परिवर्तित होता पाठ्यक्रम और नई-नई शिक्षा नीतियों के कारण शिक्षक को जागरुक व सक्षम बनाए रखने हेतु सतत प्रशिक्षण की आवश्यकता हुई । इसी कारण सेवाकालीन प्रशिक्षण स्वीकारे गए ।

जब शालेय शिक्षा पर अधिक धन खर्च किया जाने लगा, गुणवत्ता की अपेक्षा की गई, प्रसार बढ़ा लोकव्यापीकरण की बात कही गई तो सतत् प्रशिक्षण अनिवार्यता की श्रेणी में आ गया । सही भी है, शिक्षक सक्षम होगा तो बालकों को लाभ मिलेगा, गुणवत्ता सुधार होगा । आज शिक्षा में जितने प्रशिक्षण विभिन्न नामों और कामों के दिए जाते हैं आज तक कभी नही दिए गए। जितना खर्च इन प्रशिक्षणों पर किया जाता है अभी तक नहीं किया गया । प्रशिक्षणार्थियों को रहने ठहरने और भोजन की व्यवस्था के साथ-साथ दिए गए भुगतान का प्रावधान है, प्रशिक्षकों को वेतन के अतिरिक्त मानदेय और वाहन भत्तों का भुगतान किया जाता है । फिर भी अपेक्षानुकूल परिणाम परिलक्षित नहीं हो पा रहे हैं ।

ज्ञान की प्रशिक्षण ज्योत दिल्ली से भोपाल लाई जाती है, भोपाल से शिक्षा महाविद्यालय और डाइट में होते हुए चुनिंदा शालेय शिक्षकों (जिन्हें मास्टर ट्रेनर्स कहा जाता है) तक पहुँचाई जाती है । ये मास्टर ट्रेनर्स शिक्षकों को प्रशिक्षित करते हैं और ये शिक्षक वास्तव में कक्षाओं में पढ़ाते हैं । पूर्ण वास्तविकता यह नहीं कि इतनी पायदानों के बाद ट्रांसमिशन लास के सिद्धांत से अंतिम कड़ी तक बहुत कम पंहुच पाए, किंतु वास्तविकता ऊपर के क्रम पर आसीन प्रशिक्षणों की क्षमता पर लगा प्रश्न चिन्ह भी है ।

ट्रांसमिशन लास को कम करने के लिए आधुनिक संचार साधनों का भी उपयोग हो रहा है । टैलीकांफ्रेसिंग द्वारा प्रशिक्षण व्यवस्था आज की शैक्षिक व्यवस्था का प्रमुख चोचला है । हमारे शिक्षक नियमित आने वाले घंटे आधे घंटे का पर्याप्त रुचिपूर्ण तथ्यात्मक उपयोगी शैक्षिक कार्यक्रम नहीं झेल पाते तो फिर उनसे निरस उबाऊ चार पांच घंटे का गलत जानकारियों और बेढ़ब प्रस्तुतिकरण देखने की अपेक्षा करना बेमानी है । अस्तु । यहां टी.वी. प्रशिक्षण की कुछ बात करना प्रासंगिक होगी । दुख इस बात का है कि ऐसे प्रशिक्षणों के संचालक अहिन्दी, हिन्दी न बोल सकने वाले या अल्पज्ञानी प्राथमिक स्तर के शिक्षक शिक्षिका रहे हैं । इसे प्रदेश का दुभाग्य कहें या कार्यक्रम संयोजकों की लापरवाही जो पूरे हिन्दी प्रदेश से चार-पांच हिन्दी बोलने वाले विषय विशेषज्ञ नहीं जूटा पाते ।

प्रस्तुत है टेलीकान्फ्रेसिंग प्रशिक्षणों की कुछ बानगिया

1. विशेषज्ञ द्वारा प्रस्तुत प्रतिशत की अवधारणा

एक वर्गाकार कागज पर 100 छोटे वर्ग हैं, प्रदर्शन । अब दो छोटे वर्गों पर स्याही लगाकर हुआ 2 प्रतिशत । पूरे 100 में से 100 लेने पर 100 प्रतिशत । ठीक चार वर्गों वाला कागज और इसमें जोड़कर कहा गया 104प्रतिशत। शिक्षक द्वारा प्रश्न पूछकर इसे पूर्णतः गलत बताया गया तो पुनः इसी गलती का दोहराव किया गया ।

2. ऐसा पढ़ाना - मानव आकृति का एक चित्र बनवाकर उसमें विभिन्न तंत्र नाम व अंग सहित लिखे थे । प्रशिक्षिक द्वारा पाइंटर लेकर क्रम से लगातार एक घंटे तक पढ़े गए।

क्या उपयोगिता ऐसे प्रशिक्षण की ?

३. और बानगी प्रश्नों के उत्तर की -

प्रश्न - ओ.बी.बी. किट में दिया गया सामान बहुत ही घटिया था, ढोलक पर एक थाप लगाते ही हाथ अंदर।

उत्तर - ढोलक, बच्चों के लिए दी गई है । पैंतालिस वर्षीय शिक्षक जब अपने पूरे बल से जोरदार हाथ मारेगा तो ढोलक तो फटेगी ही ।

प्रश्न - राष्ट्रीय ध्वज के कट-पिट जाने, खराब हो जाने या दिवंगत नेता के शव पर लपेटे जाने के पश्चात क्या करते हैं?

उत्तर - नहीं दिया गया ।

प्रश्न - भिन्न से संबंधित शब्द अंश और हर क्या अर्थ रखते हैं ?

उत्तर - ऊपर वाली संख्या अंश और नीचे वाली संख्या हर, बस । (क्या यह अर्थ हर शिक्षक को मालूम नहीं है ? जबकि अंश याने हिस्से या भाग और हर का अर्थ है भाजक)

प्रश्न - प्रतिशत और प्रतिशतता में क्या भेद है ?

उत्तर - कोई भेद नहीं ?

प्रश्न - दक्षता और कौशल में क्या अंतर है ?

उत्तर - कोई अंतर नहीं ?

प्रशिक्षण के सरकारी आकलन में सफलता ही हाथ लगती है जबकि वास्तविकता यह है कि -

गणित जैसे सरल विषय को कैसे जटिल कर बताया जा सकता है, यह प्रशिक्षण की विशेषता रही । सीधी सादी अवधारणाओं को कितनी गलत और कठिन अवधारणाओं से जोड़कर बोझिल बनाया जा सकता है यह प्रशिक्षण की खासियत रही । हिन्दी भाषियों पर अंग्रेजी का बोझा लाद कैसे विद्वत्ता का सिक्का जमाया जा सकता है, न मालूम होने की दशा में गपलाया जा सकता है यह प्रशिक्षण की सफलता रही ।

टेलीकांफ्रेंसिंग की सबसे बड़ी अच्छाई यह होती है कि हमें टोकने वाला कोई नहीं, हम स्वयं भू है, जो चाहे कहें, जैसा चाहे कहें, उत्तर दें या टाल दें ।

जिले में प्रशिक्षण का जिम्मा है डाइट पर । डाइट के कार्यक्षेत्र को देखते हुए विशेष प्रकार के समर्पित, विषय विशेषज्ञ और सृजनशील व्याख्याताओं की आवश्यकता यहां महसूस की जाती है, जो लीक से हटकर सोचें , जिनमें नवाचार की समझ हो । किंतु वास्तविकता कुछ और ही बयान कर रही है । अपवादों को छोड़ दें तो यहाँ भीड़ में जिलास्तर पर रहने की लालसा, पढ़ाई-लिखाई से मुक्ति की चाह, हायर सेकेंड्री में कठिन समायोजन कर सकने वाले व्याख्याताओं के साथ-साथ बहुत बड़ी संख्या में ट्राइबल से सीनियरटी सहित अवतरित व्याख्याताओं का जमावड़ा हो गया है । योग्य व्याख्याताओं को आकर्षित करने का या चयन का कोई मापदंड अभी नहीं है । डाइट के व्याख्याताओं को एम.एड. होना भी अनिवार्य नहीं है ।

अब बात डाइट में प्रशिक्षण की

डाइट में पुराने बी.टी. आय. के कुछ स्टाफ सदस्य हैं जो अपना तरीका बदलने को तैयार नहीं । "हमारी तो कट गई है बाकी भी कट जावेगी, रही कितनी है "। नई भर्ती हायर सेकेंड्री से अवतरित व्याख्याताओं की है।व्याख्यान विधि से विषय की विषय - वस्तु हायर सेकेंड्री कक्षाओं में पढ़ाने में सक्षम (?) कहे जा सकते हैं। प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर की विषय वस्तु पर स्वाभाविक पकड़ कम ही देखने को मिलती है । इन्हें प्रशिक्षण में समय काटने के लिए सुकराती तरीका सर्वश्रेष्ठ लगता है जिसमें स्वयं के बिना बताए,आप क्या सोंचते हैं? कहना अधिक सरल लगता है । इस विधि को एकलव्य समूह द्वारा भी भरपूर उपयोग में लाया जाता है। इसमें सीखने वाले अध्यापक का मनोविज्ञान अधिक काम कर जाता है जो सुनने की अपेक्षा बोलने पर अधिक ध्यान देता है, फिर होता है आपस में ही कथनों का घमासान । यदि प्रशिक्षक योग्य हुआ तो निश्चित ही यह विद्या अंतर्निहित बात तक पहुंचा देती है अन्यथा बिना निष्कर्ष निकले

निकाले ही पूरा समय समाप्त हो जाता है । इस तरीके में कहे गए कथन श्याम - पट पर लिखे जाते हैं, फिर एक-एक की विश्लेषणात्मक विवेचना करवाई जाती है । सही निष्कर्ष तक पहुंचाने वाले विशेषज्ञ शिक्षक के लिए यह विधि उत्तम है, क्योंकि यह विचार मंथन व सहअभिव्यक्ति की मिसाल है । यदि उद्देश्य के पीछे समय निकालना है तो यह समय का अपव्यय ही होगा । इससे बुरा तो तब होता है जब ऐसी दशा में गलत निष्कर्ष निकाले जाते हैं। कभी-कभी असंगत अनावश्यक बातें तूल पकड़ लेती हैं, जिनका अंत गलत समझ को छोड़ जाता है ।

संख्या क्या है ? प्रशिक्षक द्वारा संख्या की समझ बताने का शुरुआती प्रश्न रहा । बेतुके/असंगत उत्तर कथनों को श्याम-पट पर लिखा गया । फिर एक-एक पर हुई चर्चा (?) का अंत हुआ । किंतु संख्या क्या है ? प्रश्न यथावत रहा । परेशानी तब और बढ़ गई जब एक प्रशिक्षार्थी द्वारा प्रशिक्षक से ही इस प्रश्न का सही उत्तर बताने को कहा गया ।

ऐसा ही एक बार शून्य सम है या विषम पर कक्षा में बहस छिड़ गई । एक घंटे के घमासान कुतर्क कथनों के बीच प्रशिक्षक निरीह प्राणी बना रहा । प्रशिक्षक के स्पष्ट उत्तर के अभाव में लोकतांत्रिक परंपरा का निर्वाह करते हुए बहुमत से यह पारित हुआ कि शून्य एक सम संख्या है । इस प्रकार पचास से अधिक शिक्षकों को एक गलत अवधारणा मिली । इसका यह आशय कदाचित नहीं कि हमारे डाइट व्याख्याताओं को कुछ नहीं आता, दिक्कत है तो अधिक आता है यह समझ लेने की । बारहवीं तक कक्षा पढ़ाने वाला प्राथमिक शिक्षण को हेय दृष्टि से देखकर अपने को उसकी पारंगतता का गलत प्रमाण-पत्र दे लेता है ।इस ज्ञान अभियान में वह प्रशिक्षण हेतु तैयारी नही करता। सबसे बड़ी दिक्कत तो यह है कि ऐसे प्रश्न ही क्यों उठाए गए जिनका उत्तर उसके पास ही नहीं ।

मास्टर ट्रेनर्स (चयनित प्राथमिक माध्यमिक) जब प्रशिक्षण देते हैं तो कथनों का घमासान और बढ़ जाता है क्योंकि प्रशिक्षक प्रशिक्षणार्थियों में से ही एक होता है ।कुछ मास्टर ट्रेनर्स अपने सीमित दायरे में काम करते हुए सफलता प्राप्त कर लेते हैं जितना कुछ, जो कुछ उन्होंने समझ पाया है, आत्मविश्वास से शिक्षकों तक पहुंचा देते हैं ।

ब्लाक स्तर पर हुए प्रशिक्षणों में व्यवस्थापकों की भोजन व्यवस्था सबसे बड़ी समस्या रही । संपूर्ण प्रशिक्षण शैक्षिक न होकर भोजन केन्द्रित हो गया । प्रशिक्षण समय के विस्तार से गुणवत्ता में क्या अंतर आया है यह विषय पुनः चिंतन योग्य है । प्रशिक्षण की उपयोगिता कार्यालयीन घंटों में भी बढ़ाई जा सकती है । इस पर विचार की आवश्यकता है । आवासीय प्रशिक्षण कितने या कितनों के लिए वास्तव में आवासीय होते हैं इस पर विचार एवं सर्वेक्षण की आवश्यकता है ।

एक प्रशिक्षण के लिए प्रशिक्षकों की क्षमता, पूर्व तैयारी और रिहर्सल की अनिवार्यता है, उसे क्या और क्यों करना है, इसकी स्पष्ट अवधारणा उसके स्वयं के दिमाग में साफ हो । एक फिल्म निर्माण हेतु सभी विशेषज्ञ जुटाए जाते हैं वे अपनी पूरी क्षमताओं से काम भी करते हैं फिर भी पिक्चर फ्लाप हो जाती है । फिर बिना तैयारी के प्रशिक्षण की सफलता के बारे में कैसे सोचा जा सकता है ?

प्रशिक्षणों की सार्थकता के लिए प्रशिक्षणों की संख्या, प्रशिक्षण लेने और देने वालों की क्षमता, विषय-वस्तु समय सीमा और प्रशिक्षकों का उचित प्रशिक्षण के साथ ही प्रशिक्षणार्थियों के मूल्यांकन की पूरी सोच पर पुर्नविचार आवश्यक है ।

यतीश कानूनगो
व्याख्याता - जिला शिक्षा और प्रशिक्षण संस्थान,देवास

सीताफल के फूल के बहाने...

□ किशोर पंवार

सोहागपुर की स्त्रोत सदस्य सुश्री सुनीला मसीह ने बताया कि फूल और फल वाले अध्याय को पढ़ाने के दौरान बच्चे सीताफल के फूल भी तोड़ लाते हैं । परंतु इस फूल के बारे में जानकारी न होने के कारण इसे छोड़ना पड़ता है।

इसी प्रकार प्रशिक्षण शिविर में भी शिक्षक फूलों में स्त्रीकेसर की संख्या को लेकर सवाल पूछते आए हैं।

इन्ही सवालों के जवाब खोजता यह लेख -

शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा जिसने सीताफल न खाया हो, इसके पेड़ न देखे हो । इसका रसीला हल्की गंध वाला मीठा गूदा बड़ा स्वादिष्ट होता है । यह मध्यम आकार का एक जंगली वृक्ष है । इसे देश भर में उगाया जाता है । वैसे पुराने किलों, महलों व खंडहरों के आसपास भी यह बहुतायत से फलता-फूलता है ।

इसके स्वादिष्ट फलों के साथ इसके फूल भी कम रोचक नहीं । जून-जुलाई में खिलने वाले इन फूलों का उपयोग जीव-विज्ञान की कक्षाओं में फूलों की रचना और व्यवस्था को समझने में बखूबी किया जा सकता है ।

सीताफल के फूल अन्य पेड़-पौधों की तरह रंगीन नहीं होते । यही कारण है कि अक्सर हमारा ध्यान इन पर नहीं जाता । परंतु फूलों के लैंगिक अंगों की रचना और व्यवस्था समझने में ये बड़े उपयोगी हैं । इसके फूल अकेले या समूह में पत्ती के अक्ष या पुराने तने पर सीधे , गूलर और बरगद की तरह लगते हैं ।

इसका हल्का हरा-पीला फूल लगभग 1 से.मी. लंबे वृंत द्वारा नीचे की और मुंह किए लटका रहता है । फूल में प्रमुखता से जो रचना दिखाई देती है वह इसकी तीन, तिकोनी हरी-पीली लंबी-मोटी पखुंड़ियां हैं । (पुस्तकों में 6 पंखड़ियों का जिक्र है ।)

फूल को पलट कर ध्यान से देखने पर वृंत के पास तीन छोटी-छोटी अंखुड़ियां भी चिपकी हुई नज़र आती है। पंखुड़ियों का निचला अंदरुनी हिस्सा हल्का जामुनी होता है । प्रत्येक पंखुड़ी 2 से 3 सेमी. लंबी, 1 से.मी. चौड़ी और आधी सेमी. मोटी होती है।

पंखुड़ी हटाने पर एक छोटा शंकुनुमा भाग नज़र आता है, जो फूल का पुष्पासन है । इसे हेंडलेंस से देखने

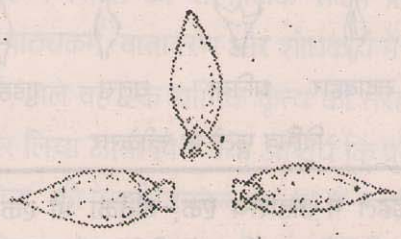

सीताफल के फूल की पंखुड़ियां

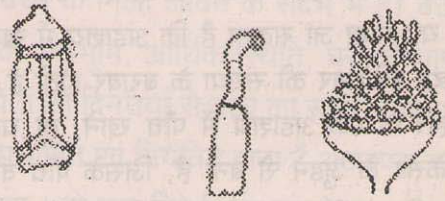

पुंकेसर स्त्रीकेसर

रेखा चित्र - श्वेता पंवार

फूल में कितने स्त्रीकेसर ?

फूलों के अध्ययन के दौरान अक्सर यह सवाल उठता है कि किसी फूल में कितने स्त्रीकेसर हैं । गुड़हल का ही उदाहरण लें तो बाहर से तो एक अंडाशय दिखता है, वर्तिका भी एक परंतु वार्तिकाग्र पाँच । अंडाशय को काटने पर भी पाँच खाने साफ नज़र आते हैं । तो गुड़हल के फूल में स्त्रीकेसर कितने एक या पाँच? इस सवाल का हल ढूंढने के लिए हम जरा आस पास के अन्य फूलों पर भी निगाह डाल लें तो अच्छा रहेगा । जैसे सदाबहार में तो दो अंडाशय साफ दिखते हैं, परंतु वर्तिका और वर्तिकाग्र दोनों जुड़े हुए और एक है। इसी तरह अकाव में दोनों अंडाशय स्वतंत्र, वर्तिका भी स्वतंत्र, परंतु वर्तिकाग्र एक है।ठीक इसका उल्टा धनिया में होता है। अंडाशय एक परंतु वर्तिका और वर्तिकाग्र दोनों अलग-अलग हैं ।

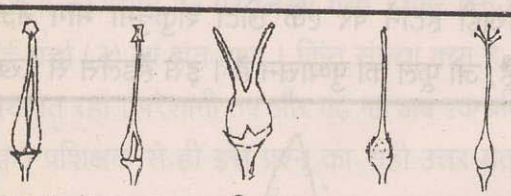

विभिन्न फूलों के स्त्रीकेसर

गुड़हल में अंडाशय एक, वर्तिका भी एक परंतु, वर्तिकाग्र पाँच है । इनमें सबसे शीर्ष पर है धतूरा, जिनमें अंडाशय, वर्तिका और वर्तिकाग्र सभी एक है । परंतु अंडाशय की काट में दो खाने दिखते हैं । अतः मोटे तोर पर यह माना जा सकता है कि अंडाशय में खानों की संख्या स्त्रीकेसर की संख्या के बराबर होती है । जैसे गुड़हल के एक अंडाशय में पाँच खाने, तो यह पाँच स्त्रीकेसर के जुड़ने से बना है, जिसके पाँच वर्तिकाग्र साफ दिखते हैं । अतः सीताफल अकाव और सदाबहार के फूलों के स्त्रीकेसर से गुड़हल और बेशरम के फूलों के स्त्रीकेसर तक विकास के दौरान इनके विभिन्न भागों के जुड़ने की एक रोचक सत्य कथा है ।

पर क्रीम रंग के ढेर सारे पुंकेसर सर्पिलक्रम में लगे नज़र आते हैं । पुंकेसर के परागकोष छोटे और मोटे होते हैं परंतु पुतंतु लगभग न के बराबर ।

थोड़ा ऊपर की और ढेर सारे स्वतन्त्र स्त्रीकेसर (अंडप) दिखते हैं । ये भी पुष्पासन पर सर्पिल क्रम (कछुआ छाप अगर बत्ती की तरह) में लगे होते हैं । प्रत्येक स्त्रीकेसर में नीचे फूला हुआ भाग अंडाशय और ऊपरी पतला वर्टिका होता है । एक कोष्ठीय अंडाशय में एक बीजांड होता है जो बाद में बीज में बदल जाता है । इन फूलों का परागण छोटे-छोटे कीटों द्वारा होता है जो इसके अंदर घूमते-फिरते दिखते हैं । इस फूल के प्रत्येक स्त्रीकेसर से एक एक बीजी सरस, गूदेदार फल बनता है जो शंक्वाकार पुष्पासन से जुड़े रहते हैं । **ऊपरी तौर पर सीताफल हमें एक बड़ा फल दिखता है, परंतु वस्तुतः यह बेरी फलों का एक गुच्छा है । सीताफल पर हमें जो उभार दिखते हैं जिन्हें बोलचाल में आंख कहा जाता है । वे दरअसल इसके स्त्रीकेसर ही हैं । इसके फूल में जो ढेर सारे स्वतंत्र स्त्रीकेसर होते हैं वे निषेचन के पश्चात आपस में जुड़े जाते हैं। परंतु उनका उपरी हिस्सा अभी भी एक दूसरे से अलग दिखता है ।**

पुष्पीय पौधों के फूलों के विकास की दृष्टि से देखा जाए तो सीताफल एक पुरातन पेड़ है, जिसमें ढेर सारे स्वतंत्र पुंकेसर और स्त्रीकेसर एक शंक्वाकार पुष्पासन पर सर्पिल क्रम में लगे रहते हैं । अब जब भी सीताफल के फूल दिखे तो सदाबहार, बेशरम और गुड़हल के साथ इसका भी अध्ययन जरुर करना । सीताफल के फूल को भूलना नहीं ।

किशोर पंवार -सहा.प्राध्यापक-शा.महा. सेंधवा

सूर्यग्रहण : सूर्य,चंद्र और पृथ्वी का खेल

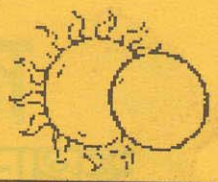

बुधवार, 11 अगस्त 1999 के दिन सूर्यास्त के ठीक पहले गुजरात, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, उड़ीसा और आंध्रप्रदेश में एक संकरी पट्टी पर खग्रास सूर्य ग्रहण दिखाई देगा ।

वैसे तो सूर्यास्त हमेशा ही सुंदर होते हैं, लेकिन 11 अगस्त का सूर्यास्त अपने आप में अनोखा होगा । एक घंटे के छोटे से अंतराल में दो बार रात होगी । कुछ मिनटों के लिये तारे चमकेंगे, खो जाएंगे, और फिर से चमकेंगे ।

ग्रहण-पथ के किसी भी स्थान पर ग्रहण की प्रक्रिया में करीब दो घंटे लगेंगे । सूर्य को पूरी तरह से ढकने का समय अधिकतम एक मिनट का होगा । शाम करीब 5 बजे ग्रहण शुरु होगा और करीब 7 बजे खत्म होगा ।

वर्ष के इस खग्रास ग्रहण का अंतर्राष्ट्रीय पथ

चंद्रमा की छाया अपनी 3 घंटे की लंबी यात्रा का प्रारंभ उत्तरी अटलांटिक से करेगी । यह क्रमशः इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी, यूगोस्लाविया, रुमानिया, तुर्की, ईरान, अफगानिस्तान, पाकिस्तान और भारत से गुजरते हुए बंगाल की खाड़ी में अपनी यात्रा का समापन करेगी । यह सिर्फ अगली सहस्त्राब्दी में वापस आएगी ।

क्या-क्या देखें ?

अंधेरा आकाश - प्रकाश का स्तर पहले तो धीरे-धीरे कम होता है, बाद में तेजी से कम होने लगता है । संपूर्णता के करीब 10 मिनट पहले तूफान की पूर्वावस्था की तरह आकाश में अंधेरा और बढ़ जाता है तथा तापमान गिर जाता है ।

बदलते हुए रंग - जैसे-जैसे ग्रहण बढ़ता है, आकाश का रंग बदलता है और परछाइयां गहरी होती जाती है ।

अर्धचंद्राकार - पेड़ों की पत्तियों के बीच के छोटे-छोटे छिद्रों द्वारा निर्मित सूर्य के सैकड़ों अर्धचन्द्राकार प्रतिबिंबों को जमीन पर बनता हुआ देखें ।

पशुओं का आचरण - जैसे अंधेरा बढ़ने लगे, विभिन्न पक्षियों व पशुओं के आचरण का निरीक्षण करें । हो सकता है कि पक्षी अपने बसेरों पर वापस आ जाएं, प्राणी वैसा आचरण करें जैसे वे अंधेरे में करते हैं, और फूल अपनी पंखूड़ियाँ बंद कर लें ।

छाया की आती हुई चादर

सूर्य के पूरी तरह से ढक जाने के ठीक पहले पश्चिमी आकाश से छाया की एक बड़ी सी चादर को अपनी तरफ तेजी से आता हुआ आप देख सकते हैं ।

बेलीज़ बीड्स - संपूर्णता के ठीक पहले और ठीक बाद में काले सूर्य के चारों तरफ कांच की मणियों की तरह चमकदार बिंदु नज़र आएंगे ।

कैसे देखें -

सूर्यग्रहण को नग्न आँखों से न देखें । इसको देखने के लिए पुराने एक्सरे की दो तीन फिल्मों को एक के ऊपर एक रखकर उनके काले वाले हिस्से में से देखें। टेलिस्कोप या बाईनाक्यूलर से सूर्य का प्रतिबंब एक सफेद कागज़ पर लेकर ग्रहण देखा जा सकता है । पिन होल केमरा बनाकर उससे ग्रहण के प्रतिबिंब को परदे पर देखा जा संकता है । ग्रहण देखनें के लिए सुरक्षित फिल्टर का उपयोग भी किया जा सकता है । ऐसे फिल्टर एकलव्य के केन्द्रों से प्राप्त किए जा सकते हैं ।

खग्रास सूर्यग्रहण के दौरान सूर्य का आभा मंडल ऐसा दिखाई देता है।

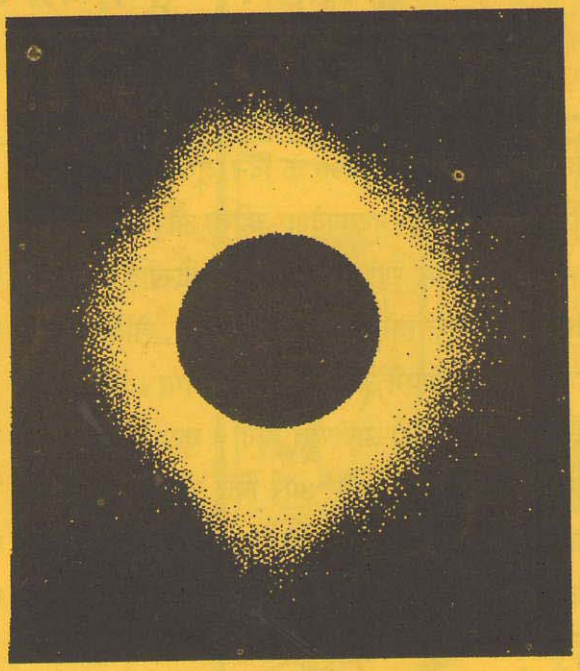

11 अगस्त 1999 को होने वाले खग्रास सूर्यग्रहण का पथ